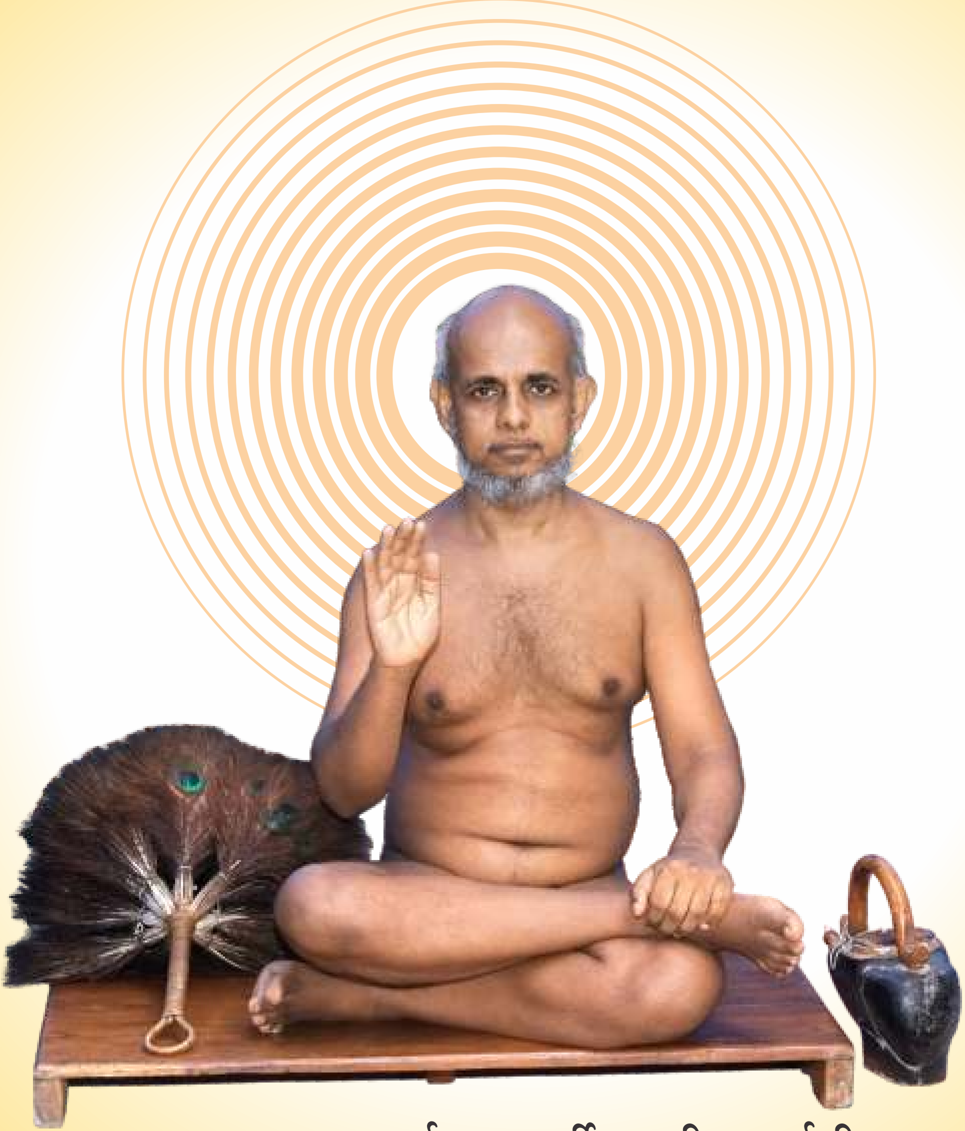

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणाः–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

विशद समवशरण महामण्डल विधान

कृतिकार :

परम पूज्य आचार्यश्री विशदसागर जी महाराज

प्राप्तिस्थान

विशद साहित्य केन्द्र श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, कुआँ वाला, जैनपुरी रेवाड़ी (हरियाणा)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

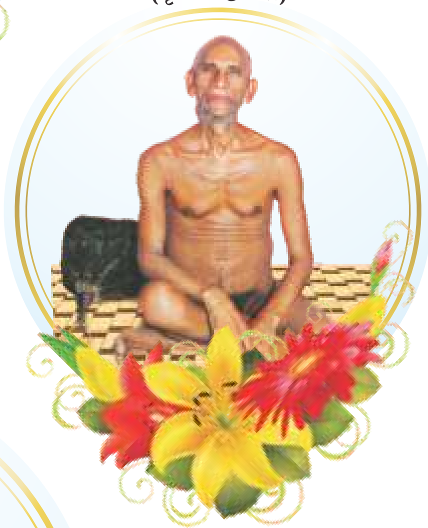

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्राय: होता है। फलत: उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तुत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

{deX
g_deaU _hm_ÊS>b {dYmZ

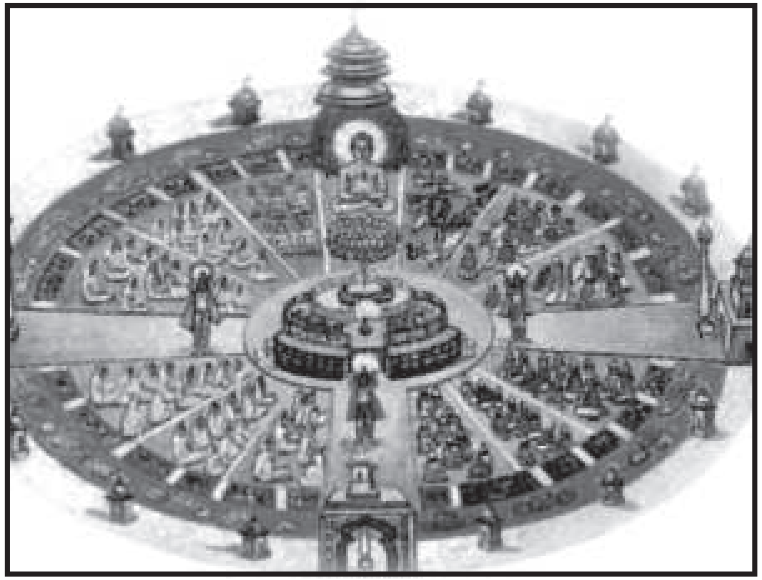

रचयिता : प.पू. आचार्य विशदसागरजी महाराज

विशद समवशरण महामण्डल विधान

कृति - **विशद समवशरण महामण्डल विधान**

कृतिकार - प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

संस्करण - प्रथम -2008 ● प्रतियाँ :1000

संकलन - मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज एवं
क्षुल्लक श्री 105 विसोमसागरजी महाराज

संपादन - ब्र.ज्योति दीदी 9829076085 आस्था दीदी 9660996425,
सपना दीदी 9829127533

संयोजन - ब्र. सोनू, किरण, आरती दीदी

प्राप्ति स्थल - 1. श्री 108 विशद सागर माध्यमिक विद्यालय
बरौदिया कलाँ, जिला-सागर (म.प्र.)-07581-274244
2. विवेक जैन, 2529, मालपुरा हाऊस,
मोतिसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर
फोन : 2503253, मो.: 9414054624
3. श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार, ए-107, बुध विहार, अलवर
मो.: 9414016566

मूल्य - 31 रु. मात्र

-: अर्थ सौजन्य :-

- ✻ श्री रोशनलालजी कमलकुमारजी अग्रवाल, वर्धमान कॉलोनी (वावलास वाले) भीलवाड़ा
- ✻ श्री राजकुमारजी अनिलकुमारजी (रोंपा वाले) आर.के. कॉलोनी, भीलवाड़ा
- ✻ श्री भँवरलालजी अजयकुमारजी अभयकुमारजी कासलीवाल
नागोरी गार्डन, बैंक ऑफ इंडिया के पीछे
- ✻ श्री राजकुमारजी नरेशकुमारजी चौधरी, गुलमण्डी शिवजी मन्दिर वाली गली, भीलवाड़ा
- ✻ श्री रमेशचन्दजी राकेशकुमारजी अग्रवाल (वावलास वाले) माणिक्य नगर
- ✻ श्री निहालचन्दजी सोनी, प्रेमी कचोरी वाले के सामने, भूपालगंज, भीलवाड़ा
- ✻ स्व. श्री शान्तिलालजी पाटोदी की पुण्य-स्मृति में
श्रीमती शकुन्तला देवी पाटोदी पुत्र कमलकुमार पाटोदी, भीलवाड़ा
साँभर वालों की तरफ से

_wÐH$: am{Oy J«m{\$H$ AmQ>© (gS>Xm emh), जयपुर ● फोन : 2313339, मो: 9829050791

आद्य कथन

श्री दिगम्बर जैन परम्परा में दो मार्गों का वर्णन किया गया **प्रथम श्रमण द्वितीय श्रावक श्रमण को साधक** कहा गया है तथा **श्रावक को आराधक** आराधना के लिए आराध्य की भक्ति पुण्याश्रव में हेतु है जो परम्परा से मोक्ष का साधन बनता है। जैनधर्म में अर्हन्त्, सिद्धाचार्य, उपाध्याय, साधु, जिनधर्म, जिनआगम, जिनचैत्य, जिन चैत्यालय, यह नव आराध्य माने गए हैं। जिसमें सर्वप्रथम और सर्व प्रमुख अर्हन्तों का नाम आता है।

जो जीव चार घातिया कर्मों का नाशकर अनन्त चतुष्ट्य प्राप्त करते हैं तथा प्रबल योग से तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध करते हैं। वह तीर्थंकर पद पाने वाले अर्हन्त् की भक्ति करते 100 इन्द्र चरणों में आराधना करते आते हैं। समवशरण तीर्थंकर की ऐसी धर्म उपदेश सभा है जिसमें पशु-पक्षी, देव-मनुष्य, ऊँच-नीच, धनी-निर्धन, शत्रु-मित्र, पापी-पुण्यात्मा, सभी एक साथ बैठकर आत्मकल्याणकारी उपदेश सुनते हैं। बड़े-बड़े महापुरुष भी इस सभा में सम्मिलित होकर अपनी जटिल समस्याओं का समाधान प्राप्त करते हैं।

आचार्य श्री जिनसेन स्वामी ने बताया कि जब चक्रवर्ती एवं राजाओं के मन में कोई शंका उत्पन्न होती, वे चौबीस तीर्थंकरों के समवशरण में जाकर अपनी शंका का समाधान करते थे। भगवान महावीर स्वामी के समवशरण में राजा श्रेणिक ने 60 हजार प्रश्न पूछे। समवशरण ऐसी सामाजिक संस्था है। जिसकी शरण में सभी प्रकार के लौकिक नेता पहुँचते, वास्तव में धर्म-नेता ऐसा लोकनायक होता है। जो निःस्वार्थ और निष्काम भाव से जनहित का उपदेश देता है। शील, संयम, सदाचार, व्यवस्था, मान-मर्यादा एवं सहयोग की भावना ही सामाजिकता का निर्वाह करने में समर्थ है। उच्च आदर्शों की स्थापना एवं वैयक्तिक जीवन में विकार संशोधन भी इसी प्रकार की संस्थाओं से सम्भव है।

पौराणिक मान्यताओं के अनुसार समवशरण की रचना देवों द्वारा होती है। कुबेर इन्द्र की आज्ञा से भगवान धर्मसभा अद्भुत, दिव्य एवं अभूतपूर्व संरचना करते हैं, आचार्य कहते हैं।

सुरेन्द्र नील निर्माणं समवृत्तं तदा बभौ ।
त्रिजगच्छ्रीमुखालोक, मंगलादर्श विभ्रमम् ।।

अर्थहृह इन्द्र नीलमणि निर्मित तथा चारों ओर से गोलाकार वह समवशरण ऐसा लगता है, मानों त्रिलोक की लक्ष्मी के मुखदर्शन का मंगलमय दर्पण ही हो।

भगवान जब विहार करते हैं तो उस समय हजार आरों वाला धर्मचक्र भगवान के आगे-आगे चलता है तथा तीर्थंकर भगवान के समवशरण में अष्ट प्रातिहार्य समलंकृत होते हैं।

इन्द्र समवशरण में स्वर्ग का सारा वैभव जिनप्रभु के चरणों में समर्पित कर देता है। यद्यपि अर्हन्त् प्रभु वीतरागी होते हैं उस वैभव को स्पर्श भी नहीं करते किन्तु यह संसारी जीवों के लिए विशेष कौतूहल बनता है। अतः श्रावक आकर्षित होकर जिनभक्ति के लिए समर्पित होते हैं। सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चारित्र प्राप्तकर अपना जीवन सफल बनाते हैं।

वर्तमान अवसर्पिणीकाल में साक्षात् तीर्थंकर का अभाव होने से भव्य जीव मूर्तियों की प्रतिष्ठा करके वेदी में स्थापित करते हुए पुण्यार्जन करते हैं। इस हेतु समवशरण की रचना कर भव्य जीव विशेष पुण्य का अर्जन कर सकें इस हेतु **'श्री समवशरण विधान'** की शुभ रचना का भाव मन में आया तथा कई लोगों ने आग्रह किया- आप अपनी सरल शब्द शृंखला से रचना करें जिससे अधिक पुण्य लाभ हो सके।

समवशरण विधान में सर्वप्रथम समुच्चय पूजन इसके बाद मानस्तम्भ वर्णन तथा चतुर्दिक मानस्तम्भ की पूजाएँ दी गईं हैं। इसके बाद प्रथम चैत्य प्रसाद चैत्यभूमि का वर्णन और चैत्यभूमि स्थित चैत्ययुक्त जिनेन्द्र पूजन दी है। द्वितीय खातिका भूमि वर्णन पूजा, तृतीय लता भूमि वर्णन-पूजा, चतुर्थ उपवन भूमि वर्णन, चतुर्विदिशा स्थित अशोक सप्तपर्ण, चम्पक आम्रवन पूजाएँ, पञ्चम ध्वजभूमि वर्णन पूजा, षष्ठी कल्पवृक्ष भूमि वर्णन, मेरुकल्प वृक्ष, मंदार कल्पवृक्ष, संतान कल्पवृक्ष, पारिजात कल्पवृक्ष पूजाएँ, सप्तम भवन पूजन भूमि वर्णन पूजन, केवलज्ञान पूजन के साथ चतुर्दिक स्तूप पूजाएँ इसके बाद श्री मण्डप भूमि पूजा, 24 तीर्थंकर के अर्घ्य जयमाला सहित वर्णन किया। इसके बाद गंधकुटी पूजन, 24 तीर्थंकर के अर्घ्य जयमाला का वर्णन है तथा शाश्वत विदेहस्य विद्यमान 20 तीर्थंकरों के पूजन अर्घ्य सम्मिलित किए हैं। गणधर पूजा 24 तीर्थंकरों के अर्घ्य, चौसठ ऋद्धिपूजन अर्घ्य जयमाला सहित है। इसके पश्चात् चक्रवर्ती आदि द्वारा जिनपूजा की गई है। अन्त में समुच्चय जयमाला द्वारा वर्णन किया गया है।

उक्त विधान रचना में अनेक शास्त्रों एवं विधानों का सहारा लिया गया है, अतः हम देव-शास्त्र-गुरु के ऋणी हैं जिन्होंने हमारे ऊपर उपकार किया है तथा सभी भव्य जीवों के लिए आशीर्वाद है। यह विधान कर पुण्य का अर्जन करें एवं ज्ञानी जन हमारे द्वारा हुई त्रुटियों को सुधारकर हमें कृतार्थ करें।

- आचार्य विशदसागर

आराध्य भक्ति

ऐसी इक भूमि है भैया, जिसकी शान निराली है।
केवलज्ञान दिलाने वाली, भूमि अतिशय शाली है।।
इस भूमि की शक्ति देखो, यहाँ न हो सुख-दुख वेदन।
ऐसे जिन प्रभु के चरणों में, वन्दन हो शत्-शत् वन्दन।।

एक जीव पृथ्वी पर आया और आकर जैसे ही उसने पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र किरणों का प्रकाश फैलते ही उसकी इच्छाएँ जिस-जिस वस्तु (पर-पदार्थ) पर उसकी दृष्टि पड़ती है उसे प्राप्त करने की होती हैं और उसे प्राप्त करने के लिए वह आँखें होते हुए भी अपने अच्छे-बुरे का विचार किए बगैर ही चलता रहता है; परन्तु कई जीव वहाँ ऐसे भी आते हैं। जिनके पास दुनियाँ की सारी प्रकाश में दिखने वाली वस्तुएँ मौजूद होती हैं पर वे उस वस्तु में आसक्त नहीं होते बल्कि उससे दूर रहकर वीतरागी भगवान की पूजा, अर्चना में अपना समय निकालते हैं। वैराग्य भावना में कहा हैह्नह्न

बीजराख फल भोगवें, ज्यों किसान जग माहि।
त्यों चक्री नृप सुख करें, धर्म विसारैं नाहि।।

जिस प्रकार किसान आई हुई फसल में से पहले बीज के रूप में अनाज को पुनः खेत में बोने के लिए रख लेता है। फिर बाद में उसका उपयोग आगे करता है। ठीक ऐसे ही जो पुण्य पुरुष हुआ करते हैं। वे प्राप्त हुई धन-सम्पदा को भगवान की पूजा, भक्ति आदि करने में व्यय करते हैं और उस पूजा, भक्ति के प्रभाव से वे स्वयं पूज्य बन जाते हैं। ऐसे पूज्य पुरुषों को जब देव देखते हैं तो वे अतिप्रसन्न होते हैं और प्रसन्न होकर वे उनकी पूजा, भक्ति करना चाहते हैं तब वह देव उस पुण्य पुरुष की पूजा करने के लिए विशेष विभूतियों से सम्पन्न समवशरण की रचना करते हैं और समवशरण में प्रभु को बैठाकर दिव्य रत्नों से प्रभु-पूजा, प्रभु-गुणगान करते हैं। ऐसे पूज्य जिनेन्द्र देव की पूजन हम मानव अपनी अष्ट मंगल द्रव्य के द्वारा करके पुण्य का संचय कर सकें जिसके लिए परम पूज्य क्षमामूर्ति आचार्य गुरुदेव श्री 108 विशदसागरजी महाराज ने **'समवशरण पूजन विधान'** के माध्यम से जो प्रभु का गुणगान किया वह आज हमारे पास आ गया है। सुबोध शब्द शृंखला के माध्यम से हम प्रभु का गुणगान कर अद्भुत पुण्य का संचय कर सकते हैं और सांसारिक वस्तुओं को तो प्राप्त कर ही लेते हैं; परन्तु पूजा करते-करते स्वयं भी पूज्यता को प्राप्त हो सकते हैं।

पूज्य गुरुदेव ने अपनी कल्याणमयी साधना के अमूल्य पलों में प्रभु की भक्ति कर जो आलम्बन हमें **'समवशरण विधान'** के माध्यम से प्रदान किया है, उसके लिए हम श्रावक कई जन्मों तक ऋणी रहेंगे।

विशद गुरु के कर-कमलों में, नित जिनवाणी रहती है।
भावों की निर्मल सरिता में, भक्ति गंगा बहती है।।
पल-पल, छिन-छिन भक्ति द्वारा, जो प्रभु का गुणगान करें।
उन चरणों शत् वन्दन मेरा, शीघ्र विशद गुरु मोक्ष वरें।।

समवशरण व्रत विधि एवं जाप मंत्र

विधिह्नह्न समवशरण का व्रत समवशरण की आठ भूमि, तीन कटनी आदि को लक्षित कर दिया जाता है। इसमें 24 व्रत हैं। व्रत के दिन तीर्थंकर प्रतिमा का पंचामृत अभिषेक, समवशरण पूजा करके उपवास करें। उत्तम विधि उपवास, मध्यम अल्पाहार एवं जघन्य एकाशन है। व्रत पूर्ण करके उद्यापन में समवशरण रचना बनवाकर प्रतिष्ठा कराना अथवा समवशरण मंडल विधान करना, 24 ग्रंथ आदि का दान देना। जहाँ-जहाँ प्रभु के समवशरण की रचना बनी हुई हैं उनके दर्शन करना। इस व्रत का फल तत्काल में संपूर्ण मनोरथों की सिद्धि, परम्परा से समवशरण के दर्शन का लाभ और तीर्थंकर पद की प्राप्ति आदि भी संभव है।

समुच्चय मंत्रह्नह्न (1) ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनाय सकलगुणकरण्डाय श्रीसर्वज्ञाय अर्हत्परमेष्ठिने नमः। (2) ॐ ह्रीं समवशरणपद्मसूर्यवृषभादिवर्धमानान्तेभ्यो नमः।

प्रत्येक वृत के पृथक-पृथक मंत्रह्नह्न (1) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवशरणसंबंधि-मानस्तंभस्थित सर्वजिनप्रतिमाभ्यो नमः। (2) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवशरणसंबंधि-चैत्यप्रासादस्थित सर्वजिनप्रतिमाभ्यो नमः। (3) ॐ ह्रीं खातिकाभूमिवैभवमंडितसमवशरणस्थित चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (4) ॐ ह्रीं लताभूमिवैभवमंडितसमवशरणस्थित चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (5) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवशरणसंबंधि-उपवनभूमिचतुर्दिक् चैत्यवृक्षस्थितसर्वजिनप्रतिमाभ्यो नमः। (6) ॐ ह्रीं ध्वजभूमिवैभवमंडितसमवशरणस्थित चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (7) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवशरणसंबंधि-कल्पवृक्षभूमिचतुर्दिक्-सिद्धार्थवृक्षस्थितसिद्धप्रतिमाभ्यो नमः। (8) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवशरणसंबंधि-भवनभूमिस्थितनवनस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमाभ्यो नमः। (9) ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमिमंडितसमवशरण-विभूतिधारक चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (10) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवशरणसंबंधि-प्रथमकटनीस्थितयक्षेन्द्रमस्तकोपरिविराजमान धर्मचक्रेभ्यो नमः। (11) ॐ ह्रीं द्वितीयकटनीउपरि-अष्टमहाध्वजावैभवधारकचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (12) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवशरणसंबंधि-तृतीयपीठोपरिस्थितगंधकुटीभ्यो नमः। (13) ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशदतिशयसमन्वितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (14) ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्यसमन्वित-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (15) ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानगुणसमन्वितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (16) ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनगुणसमन्वितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (17) ॐ ह्रीं अनन्तसौख्यगुणसमन्वित-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (18) ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यगुणसमन्वितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (19) ॐ ह्रीं अष्टादशमहादोषविरहितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (20) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकर-समवशरणस्थितएकोनषष्ट्यधिकचतुर्दश शतगणधरादिअष्टाविंशतिलक्षअष्टचत्वारिंशतसहस्रसर्वमुनिभ्यो नमः। (21) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवशरणस्थितब्राह्मीगणिनीप्रमुख-पंचाशल्लक्ष-पंचाशत्सहस्र-द्वयशतपंचाशत्आर्यिकाभ्यो नमः *अथवा* ॐ ह्रीं समवशरणस्थितब्राह्मीगणिनीप्रमुखपंचाशल्लक्ष-पंचाशत्सहस्रद्वयशतपंचाशदार्यिकावंदितचरणकमलचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (22) ॐ ह्रीं समवशरणस्थितअसंख्यातदेवदेवीवंदितचरणकमलचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (23) ॐ ह्रीं समवशरणस्थितसंख्यातमनुष्यगणश्रावकश्राविका-वंदितचरणकमल चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः। (24) ॐ ह्रीं समवशरणस्थितपरस्परविरोधविवर्जित संख्याततिर्यग्गणवंदितचरणकमलचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः।

विषय-सूची

1.	आद्य कथन	3
2.	आराध्य भक्ति	5
3.	समवशरण व्रत विधि एवं जाप मंत्र	6
4.	देव-शास्त्र-गुरु पूजन	8
5.	नवदेवता पूजा	13
6.	जिनाष्टक	18
7.	समवशरण भूमिका	20
8.	समवशरण समुच्चय पूजन	21
9.	मानस्तम्भ सम्बन्धी सोपान वर्णन-पूजा	27
10.	प्रथम चैत्य प्रसाद भूमि वर्णन-पूजा	49
11.	द्वितीय खातिका भूमि वर्णन-पूजा	56
12.	तृतीय पुष्पवाटिका (लता) भूमि वर्णन-पूजा	62
13.	चतुर्थ उपवन भूमि वर्णन-पूजा	72
14.	पञ्चम ध्वज भूमि वर्णन-पूजा	84
15.	षष्ठम कल्पवृक्ष भूमि वर्णन	93
16.	सप्तम भवन भूमि वर्णन-पूजा	107
17.	केवलज्ञान पूजा	111
18.	अष्टम श्री मण्डप वर्णन-पूजा	125
19.	चौबीस तीर्थंकरों के अर्घ्य	135
20.	श्री गंधकुटी पूजा	140
21.	चौबीस तीर्थंकरों के अर्घ्य	142
22.	चक्रवती कामदेव बलभद्र आदिकृत पूजा	151
23.	जिनेन्द्र विहार वर्णन	155
24.	सर्व समुच्चय पूजा	156
25.	24 गणधर मुनि पूजन -अर्घ्य	162
26.	चौसठ ऋद्धि पूजा एवं अर्घ्य	173
27.	समुच्चय जयमाला	191
28.	आरती	194
29.	प्रशस्ति	195
30.	आचार्यश्री पूजन एवं आरती	196

श्री देव-शास्त्र-गुरु समुच्चय पूजन

स्थापना

देव शास्त्र गुरु के चरणों हम, सादर शीष झुकाते हैं।
कृत्रिमाकृत्रिम चैत्य-चैत्यालय, सिद्ध प्रभु को ध्याते हैं।
श्री बीस जिनेन्द्र विदेहों के, अरु सिद्ध क्षेत्र जग के सारे।
हम विशद भाव से गुण गाते, ये मंगलमय तारण हारे।
हमने प्रमुदित शुभ भावों से, तुमको हे नाथ ! पुकारा है।
मम् डूब रही भव नौका को, जग में वश एक सहारा है।
हे करुणा कर ! करुणा करके, भव सागर से अब पार करो।
मम् हृदय कमल में आ तिष्ठो, बस इतना सा उपकार करो।।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानन।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक

हम प्रासुक जल लेकर आये, निज अन्तर्मन निर्मल करने।
अपने अन्तर के भावों को, शुभ सरल भावना से भरने।।
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें।।1।।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ ! शरण में आये हैं, भव के सन्ताप सताए हैं।
यह परम सुगन्धित चंदन ले, प्रभु चरण शरण में आये हैं।।
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें।।2।।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह भव ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अक्षय निधि को भूल रहे, प्रभु अक्षय निधी प्रदान करो।
यह अक्षत लाए चरणों में, प्रभु अक्षय निधि का दान करो।।
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें।।3।।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

यद्यपि पंकज की शोभा भी, मानस मधुकर को हर्षाए।
अब काम कलंक नशाने को, मनहर कुसुमांजलि ले आए।।
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें।।4।।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह काम बाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ये षट् रस व्यंजन नाथ हमें, सन्तुष्ट पूर्ण न कर पाये।
चेतन की क्षुधा मिटाने को, नैवेद्य चरण में हम लाए।।
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें।।5।।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक के विविध समूहों से, अज्ञान तिमिर न मिट पाए।
अब मोह तिमिर के नाश हेतु, हम दीप जलाकर ले आए।।
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें।।6।।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ये परम सुगंधित धूप प्रभु, चेतन के गुण न महकाए।
अब अष्ट कर्म के नाश हेतु, हम धूप जलाने को आए।।
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें।।7।।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह अष्ट कर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन तरु में फल खाए कई, लेकिन वे सब निष्फल पाए।
अब विशद मोक्ष फल पाने को, श्री चरणों में श्री फल लाए।।
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें।।8।।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह मोक्ष फल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अष्ट कर्म आवरणों के, आतंक से बहुत सताए हैं।
वसु कर्मों का हो नाश प्रभु, वसु द्रव्य संजोकर लाए हैं।।
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें।।9।।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

श्री देव शास्त्र गुरु मंगलमय हैं, अरु मंगल श्री सिद्ध महन्त।
बीस विदेह के जिनवर मंगल, मंगलमय हैं तीर्थ अनन्त।।

छन्द तोटक

जय अरि नाशक अरिहंत जिनं, श्री जिनवर छियालिस मूल गुणं।
जय महा मदन मद मान हनं, भवि भ्रमर सरोजन कुंज वनं।।
जय कर्म चतुष्टय चूर करं, दृग ज्ञान वीर्य सुख नन्त वरं।
जय मोह महारिपु नाशकरं, जय केवल ज्ञान प्रकाश करं।।1 ।।
जय कृत्रिमाकृत्रिम चैत्य जिनं, जय अकृत्रिम शुभ चैत्य वनं।
जय ऊर्ध्व अधो के जिन चैत्यं, इनको हम ध्याते हैं नित्यं।।
जय स्वर्ग लोक के सर्व देव, जय भावन व्यन्तर ज्योतिषेव।
जय भाव सहित पूजे सु एव, हम पूज रहे जिन को स्वयमेव।।2।।
श्री जिनवाणी ओंकार रूप, शुभ मंगलमय पावन अनूप।
जो अनेकान्तमय गुणधारी, अरु स्याद्वाद शैली प्यारी।।
है सम्यक् ज्ञान प्रमाण युक्त, एकान्तवाद से पूर्ण मुक्त।
जो नयावली युत सजल विमल, श्री जैनागम है पूर्ण अमल।। 3।।
जय रत्नत्रय युत गुरूवरं, जय ज्ञान दिवाकर सूरि परं।
जय गुप्ति समिती शील धरं, जय शिष्य अनुग्रह पूर्ण करं।।
गुरु पञ्चाचार के धारी हो, तुम जग-जन के उपकारी हो।
गुरु आतम ब्रह्म बिहारी हो, तुम मोह रहित अविकारी हो।।4।।
जय सर्व कर्म विध्वंस करं, जय सिद्ध शिला पे वास करं।
जिनके प्रगटे है आठ गुणं, जय द्रव्य भाव नो कर्महनं।।

जय नित्य निरंजन विमल अमल, जय लीन सुखामृत अटल अचल।
जय शुद्ध बुद्ध अविकार परं, जय चित् चैतन्य सु देह हरं।।5।।
जय विद्यमान जिनराज परं, सीमंधर आदि ज्ञान करं।
जिन कोटि पूर्व सब आयु वरं, जिन धनुष पांच सौ देह परं।।
जो पंच विदेहों में राजे, जय बीस जिनेश्वर सुख साजे।
जिनको शत् इन्द्र सदा ध्यावें, उनका यश मंगलमय गावें।।6।।
जय अष्टापद आदीश जिनं, जय उर्जयन्त श्री नेमि जिनं।
जय वासुपूज्य चम्पापुर जी, श्री वीर प्रभु पावापुरजी।।
श्री बीस जिनेश सम्मेदगिरी, अरु सिद्ध क्षेत्र भूमि सगरी।
इनकी रज को सिर नावत हैं, इनका यश मंगल गावत हैं।।7।।

(आर्या छन्द)

पूर्वाचार्य कथित देवों को, सम्यक् वन्दन करें त्रिकाल।
पञ्च गुरू जिन धर्म चैत्य श्रुत, चैत्यालय को है नत भाल।।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थंकर सिद्ध क्षेत्र समूह अनर्घ पद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- तीन लोक तिहुँ काल के, नमूँ सर्व अरहंत।
अष्ट द्रव्य से पूजकर, पाऊँ भव का अन्त।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोक एवं त्रिकाल वर्ती तीर्थंकर जिनेन्द्रेभ्यो: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पांजलिं क्षिपेत् (कायोत्सर्गं कुरु...)

श्री नवदेवता पूजा

स्थापना

हे लोक पूज्य अरिहंत नमन् !, हे कर्म विनाशक सिद्ध नमन् ! ।
आचार्य देव के चरण नमन्, अरु उपाध्याय को शत् वन्दन।।
हे सर्व साधु है तुम्हें नमन् !, हे जिनवाणी माँ तुम्हें नमन् !।
शुभ जैन धर्म को करूँ नमन्, जिनबिम्ब जिनालय को वन्दन।।
नव देव जगत् में पूज्य 'विशद', है मंगलमय इनका दर्शन।
नव कोटि शुद्ध हो करते हैं, हम नव देवों का आह्वानन।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालय समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालय समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालय समूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

हम तो अनादि से रोगी हैं, भव बाधा हरने आये हैं।
हे प्रभु अन्तर तम साफ करो, हम प्रासुक जल भर लाये हैं।।
नव कोटि शुद्ध नव देवों की, भक्ती से सारे कर्म धुलें।
हे नाथ! आपके चरणों में, श्रद्धा के पावन सुमन खिलें।।1।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो: जन्म, जरा, मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार ताप में जलकर हमने, अगणित अति दुख पाये हैं।
हम परम सुगंधित चंदन ले, संताप नशाने आये हैं।।
नव कोटि शुद्ध नव देवों की, भक्ती से भव संताप गलें।
हे नाथ ! आपके चरणों में श्रद्धा के पावन सुमन खिलें।।2।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो: संसार ताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह जग वैभव क्षण भंगुर है, उसको पाकर हम अकुलाए ।
अब अक्षय पद के हेतु प्रभू, हम अक्षत चरणों में लाए ।।
नवकोटि शुद्ध नव देवों की, अर्चाकर अक्षय शांति मिले।
हे नाथ! आपके चरणों में, श्रद्धा के पावन सुमन खिलें।।3।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो: अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बहु काम व्यथा से घायल हो, भव सागर में गोते खाये।
हे प्रभु! आपके चरणों में, हम सुमन सुकोमल ले आये।।
नव कोटि शुद्ध नव देवों की, अर्चाकर अनुपम फूल खिलें।
हे नाथ! आपके चरणों में, श्रद्धा के पावन सुमन खिलें।।4।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो:कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हम क्षुधा रोग से अति व्याकुल,होकर के प्रभु अकुलाए हैं।
यह क्षुधा मेटने हेतु चरण, नैवेद्य सुसुन्दर लाए हैं।।
नव कोटि शुद्ध नव देवों की, भक्ती कर सारे रोग टलें।
हे नाथ! आपके चरणों में, श्रद्धा के पावन सुमन खिलें।।5।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो: क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु मोह तिमिर ने सदियों से, हमको जग में भरमाया है।
उस मोह अन्ध के नाश हेतु, मणिमय शुभ दीप जलाया है।
नव कोटि शुद्ध नव देवों की, अर्चा कर ज्ञान के दीप जलें।
हे नाथ! आपके चरणों में, श्रद्धा के पावन सुमन खिलें।।6।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हसिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो: महा मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

भव वन में ज्वाला धधक रही, कर्मों के नाथ सतायें हैं।
हों द्रव्य भाव नो कर्म नाश, अग्नि में धूप जलायें हैं।

नव कोटि शुद्ध नव देवों की, पूजा करके वसु कर्म जलें ।
हे नाथ! आपके चरणों में, श्रद्धा के पावन सुमन खिलें ।।7।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो: अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सारे जग के फल खाकर भी, हम तृप्त नहीं हो पाए हैं।
अब मोक्ष महाफल दो स्वामी, हम श्रीफल लेकर आए हैं।।
नव कोटि शुद्ध नव देवों की, भक्ति कर हमको मोक्ष मिले।
हे नाथ! आपके चरणों में, श्रद्धा के पावन सुमन खिलें।।8 ।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो: मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हमने संसार सरोवर में, सदियों से गोते खाये हैं।
अक्षय अनर्घ पद पाने को, वसु द्रव्य संजोकर लाये हैं।।
नव कोटि शुद्ध नव देवों के, वन्दन से सारे विघ्न टलें।
हे नाथ! आपके चरणों में, श्रद्धा के पावन सुमन खिलें।।3।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो: अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

घत्ता छन्द

नव देव हमारे जगत सहारे, चरणों देते जल धारा।
मन वच तन ध्याते जिन गुण गाते, मंगलमय हो जग सारा।।
(शांतये शांति धारा करोति)

ले सुमन मनोहर अंजलि में भर, पुष्पांजलि दे हर्षाएँ।
शिवमग के दाता ज्ञानप्रदाता, नव देवों के गुण गाएँ।।
(दिव्य पुष्पांजलि क्षिपेत्)

जाप्यह्व ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो नम:।

जयमाला

दोहा– मंगलमय नव देवता, मंगल करें त्रिकाल।
मंगलमय मंगल परम, गाते हैं जयमाल।।

(चाल टप्पा)

अर्हन्तों ने कर्म घातिया, नाश किए भाई।
दर्शन ज्ञान अनन्तवीर्य सुख, प्रभु ने प्रगटाई ।।
जिनेश्वर पूजों हो भाई।
नव देवों को नव कोटी से, पूजों हो भाई। जि...

सर्वकर्म का नाश किया है, सिद्ध दशा पाई।
अष्टगुणों की सिद्धि पाकर, सिद्ध शिला जाई ।।
जिनेश्वर पूजों हो भाई।
नव देवों को नव कोटी से, पूजों हो भाई। जि...

पञ्चाचार का पालन करते, गुण छत्तिस पाई।
शिक्षा दीक्षा देने वाले, जैनाचार्य भाई ।।
जिनेश्वर पूजों हो भाई।
नव देवों को नव कोटि से, पूजों हो भाई।। जि...

उपाध्याय है ज्ञान सरोवर, गुण पच्चिस पाई।
रत्नत्रय को पाने वाले, शिक्षा दें भाई।।
जिनेश्वर पूजों हो भाई।
नव देवों को नव कोटि से, पूजों हो भाई ।। जि...

ज्ञान ध्यान तप में रत रहते, जैन मुनी भाई।
वीतराग मय जिन शासन की, महिमा दिखलाई।
जिनेश्वर पूजों हो भाई।
नव देवों को नव कोटि से, पूजों हो भाई ।। जि...

सम्यक्दर्शन ज्ञान चरित्रमय, जैन धर्म भाई।
परम अहिंसा की महिमा युत, क्षमा आदि पाई।।
जिनेश्वर पूजों हो भाई।
नव देवों को नव कोटि से, पूजों हो भाई।। जि...

श्री जिनेन्द्र की ओम् कार मय, वाणी सुखदाई।
लोकालोक प्रकाशक कारण, जैनागम भाई।।
जिनेश्वर पूजों हो भाई।
नव देवों को नव कोटि से, पूजों हो भाई।। जि...

वीतराग जिनबिम्ब मनोहर, भविजन सुखदाई।।
वीतराग अरु जैन धर्म की, महिमा प्रगटाई।।
जिनेश्वर पूजों हो भाई।
नव देवों को नव कोटि से, पूजों हो भाई।। जि...

घंटा तोरण सहित मनोहर, चैत्यालय भाई।
वेदी पर जिन बिम्ब विराजित, जिन महिमा गाई।।
जिनेश्वर पूजों हो भाई।
नव देवों को नव कोटि से, पूजों हो भाई।। जि...

दोहा– नव देवों को पूजकर, पाऊँ मुक्ती धाम।
"विशद" भाव से कर रहे, शत्-शत् बार प्रणाम्।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिन धर्म जिनागम जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो: महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा– भक्ति भाव के साथ, जो पूजें नव देवता।
पावे मुक्ति वास, अजर अमर पद को लहें।।

(इत्याशीर्वादः पुष्पांजलि क्षिपेत्)

जिनाष्टक

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

पृथ्वी से आकाश में जाकर, धनुष पञ्च हजार प्रमाण।
बीस हजार सीढ़ियों के भी, ऊपर श्रीजिन का स्थान।।
धन कुबेर ने समवशरण की, सभा का कीन्हा है विस्तार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बार।।1।।

धूलि साल के बाद वेदिका, वेदी के भी आगे साल।
वेदी साल अरु वेदी रथ के, बाद में शोभित होता साल।।
क्रमशः वेदी शोभित होती, आगे इसी तरह विस्तार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बार।।2।।

चैत्यालय प्रासाद खातिका, लता और पावन केतु।
कल्पवृक्ष गृह सप्त भूमियाँ, बारह सभा प्रवचन हेतु।।
इसके ऊपर तीन पीठिका, शोभित होती हैं मनहार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बार।।3।।

गरुण और कमलांबर माला, हंस मृगेन्द्र मयूर मतंग।
गोपति रथ से चिह्नित ध्वज दश, लहराती होके निःसंग।।
विजय पताका समवशरण की, फहराती है मंगलकार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बार।।4।।

मुनी कल्प बनिता वृतिका, भ भौम नाग स्त्री सारी।
भवन भौम भ कल्पदेव सब, होते हैं ऋद्धीधारी।।
नर पशु भी कोठों में स्थित, शीष झुकाते बारम्बार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बार।।5।।

कल्पवृक्ष दुन्दुभि सिंहासन, भामण्डल चाँवर तिय छत्र।
पुष्प वृष्टि अरु दिव्य ध्वनियुत, प्रातिहार्य वसु शुभ सर्वत्र।।
समवशरण शोभित होता है, सम्यक्दर्शन का आधार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बार।।6।।

पंखा झारी कलश सुदर्पण, सुप्रतीक है शोभामान।
छत्र त्रय ध्वज चामर सुंदर, इनका कौन करे गुणगान।।
अष्ट शतक प्रत्येक सुशोभित, द्रव्य विराजित मंगलकार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बार।।7।।

निधी मार्ग स्तंभ सुगोपुर, वापी चैत्य नाट्यशाला।
चैत्य स्तूप तालाब धूप घट, तोरण शुभ फूलों वाला।।
क्रीडापर्वत तरुवर अनुपम, जिनगृह का सुंदर शृंगार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बार।।8।।

सेनापति घोड़ा अरु हाथी, स्त्री और कांकिड़ी रत्न।
कारीगर अरु हर्म्यपति असि, दण्ड छत्र चूड़ामणि रत्न।।
चक्र सुदर्शन और पुरोहित, के स्वामी झुकते चरणार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बार।।9।।

पद्म काल अरु महाकाल शुभ, सर्वरत्न पाण्डु पिंगल।
शंख और नैसर्प सुमाणव, नव निधियाँ होती मंगल।।
इनके स्वामी चरणों झुकते, इन सबके हो तारणहार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बार।।10।।

घातिकर्म को नाश किया है, चौबीस अतिशय भी पाए।
अनंत चतुष्टय सहित हुए हैं, प्रातिहार्य वसु उपजाए।।
कल्याणक पाए पांचों ही, करो 'विशद' हमको भवपार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बार।।11।।

* * *

समवशरण भूमिका

नव देवों के चरण में, नव कोटि के साथ।
समवशरण जिनदेव के, झुका रहे हम माथ।।

काल अनादि है अनन्त अरु, लोकालोक अनन्त रहा।
कर्म के फल से इस प्राणी ने, जन्म-मरण का दुःख सहा।।
मिथ्या और कषायों के वश, पर को हमने अपनाया।
स्वयं आपको जान न पाये, कोई काम नहीं आया।।1।।
कर्म मोहनीय के नशते ही, ज्ञानावरणी कर्म नशे।
नशे दर्शना वर्ण कर्म अरु, अन्तराय भी पूर्ण नशे।।
केवल दर्शन ज्ञान वीर्य सुख, अनन्त चतुष्टय पाते हैं।
सुर नर किन्नर पशु के स्वामी, चरणों शीश झुकाते हैं।।2।।
देव-शास्त्र-गुरु के प्रति श्रद्धा, धारण करते हैं जो जीव।
सम्यक् ज्ञानी हो जाते वह, कर्म निर्जरा करें अतीव।।
सम्यक् चारित्र पाने वाले, सम्यक् तप भी पाते हैं।
मोक्ष मार्ग पर बढ़ने वाले, आराधक बन जाते हैं।।3।।
संवर सहित निर्जरा करके, केवलज्ञान जगाते हैं।
चार घातिया कर्म नाशकर, अनन्त चतुष्टय पाते हैं।।
धनद इन्द्र की आज्ञा पाकर, समवशरण बनवाते हैं।
सौ-सौ इन्द्र वन्दना करने, स्वर्ग लोक से आते हैं।।4।।
श्री जिनेन्द्र के चतुर्दिशा में, दर्शन होते अपरम्पार।
भव्य जीव पूजा अर्चाकर, वन्दन करते बारम्बार।।
समवशरण की महिमा अनुपम, पुण्य का फल यह रहा महान।
तीर्थंकर पद पाने वाले, गुण छियालिस पाते भगवान।।5।।
विशद भावना भाते हैं हम, समवशरण में हों दर्शन।
पुण्य उदय कब आएगा जब, जिन पद में होगा वन्दन।।
कर्म घातियाँ नाश करेंगे, निज पद में होगा विश्राम।
भ्रमण नाश संसार वास का, शिवपुर का पाएँगे धाम।।6।।

समवशरण महामण्डल विधान

- आचार्य विशदसागर

समवशरण पूजन प्रारम्भ

(स्थापना)

पुण्य उदय से समोशरण में, भव्य जीव जा पाते हैं।
श्री जिनवर के दर्शन करके, अपने भाग्य जगाते हैं।।
वृषभादि चौबीस जिनेश्वर, का आराधन करते हैं।
हृदय कमल में आह्वानन कर, कोष पुण्य से भरते हैं।।
श्री जिनेन्द्र के समवशरण में, जाने का सौभाग्य मिले।
'विशद' हृदय के उपवन की शुभ, कोमल कलिका शीघ्र खिले।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र मम् सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

श्री जिनवर की पूजा करने, प्रासुक जल भर लाये हैं।
जन्म जरादि रोग नशाने, चरण शरण में आये हैं।।
भिन्न-भिन्न चौबीसों जिन के, भाव सहित गुण गाते हैं।
तुमसे गुण को पाने हेतु, चरणों शीश झुकाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन केशर आदि सुगन्धित, चन्दन घिसकर लाये हैं।
भव सन्ताप नशाने हेतु, चरण शरण में आये हैं।।
भिन्न-भिन्न चौबीसों जिन के, भाव सहित गुण गाते हैं।
तुमसे गुण को पाने हेतु, चरणों शीश झुकाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

देव जीर सालि के चावल, अमल अखण्डित लाये हैं।
अक्षय पद की प्राप्ति हेतु, श्री जिन चरण चढ़ाये हैं।।
भिन्न-भिन्न चौबीसों जिन के, भाव सहित गुण गाते हैं।
तुमसे गुण को पाने हेतु, चरणों शीश झुकाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

कमल केतकी बकुल केवड़ा, के शुभ थाल सजाये हैं।
काम कलंक नशाने हेतु, चरण शरण में लाये हैं।।
भिन्न-भिन्न चौबीसों जिन के, भाव सहित गुण गाते हैं।
तुमसे गुण को पाने हेतु, चरणों शीश झुकाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय कामवाण विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

काजू किसमिस पिस्ता आदिक, से पकवान बनाए हैं।
क्षुधा रोग के नाशन हेतु, श्री जिन चरण चढ़ाये हैं।।
भिन्न-भिन्न चौबीसों जिन के, भाव सहित गुण गाते हैं।
तुमसे गुण को पाने हेतु, चरणों शीश झुकाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिमय दीप सुजगमग करते, रत्नजड़ित हम लाये हैं।
मोह तिमिर का नाश होय मम्, श्री चरणों में आये हैं।।
भिन्न-भिन्न चौबीसों जिन के, भाव सहित गुण गाते हैं।
तुमसे गुण को पाने हेतु, चरणों शीश झुकाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय महामोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु शुभ धूप दशांगी, एक मिलाकर लाये हैं।
अष्ट कर्म के नाशन हेतु, अग्नि बीच जलाये हैं।।
भिन्न-भिन्न चौबीसों जिन के, भाव सहित गुण गाते हैं।
तुमसे गुण को पाने हेतु, चरणों शीश झुकाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल अरु बादाम सुपाड़ी, सेव नारंगी लाये हैं।
मोक्ष महाफल पाने हेतु, चरण शरण में आये हैं।।
भिन्न-भिन्न चौबीसों जिन के, भाव सहित गुण गाते हैं।
तुमसे गुण को पाने हेतु, चरणों शीश झुकाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप फल लाये हैं।
अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर, अर्घ्य चढ़ाने आये हैं।।
भिन्न-भिन्न चौबीसों जिन के, भाव सहित गुण गाते हैं।
तुमसे गुण को पाने हेतु, चरणों शीश झुकाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा : लेकर निर्मल नीर, शांति धारा दे रहे।
रहे हृदय में धीर, मोक्ष मार्ग पर हम बढ़ें।।

(शान्तये शांतिधारा...)

दोहा : समवशरण मनहार, तीनों लोकों में रहा।
अनुपम है शुभकार, पुष्पाञ्जलि करते अहा।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा : चौबीसों जिनराज के समोशरण सुखकार।
धन कुबेर रचता स्वयं, आके विविध प्रकार।।

(चाल छंद)

जय-जय श्री जिनदेवा, सुरनर करते नित सेवा।
जय-जय अनंत गुणधारी, जय आतम ब्रह्म बिहारी।।
प्रभु दर्श ज्ञान सुख पाए, अरु वीर्य अनंत उपजाए।
श्री जिनवर जग उपकारी, हैं जग में मंगलकारी।।

सुन देव सभी हर्षाए, जिनवर की महिमा गाए।
सुरपति की आज्ञा पाये, धनपति रत्न वर्षाए।।
फिर समवशरण बनवाया, मणियों से खूब सजाया।
श्री जिनवर..........

प्रति सीढ़ी की ऊँचाई, इक हाथ रही है भाई।
सब बीस हजार कहीं हैं, कोइ बाधा वहाँ नहीं है।।

लूले लंगड़े नर-नारी, चढ़ जाते सम्यक्धारी।
श्री जिनवर..........

शुभ धूलिशाल कहलाया, पहला परकोटा गाया।
चारों दिश में अभ्यंतर, हैं मानस्तंभ सु मनहर।।
बारह योजन से दिखते, द्वादश गुणे ऊँचे रहते।
श्री जिनवर..........

चऊ दिश में जिन दर्शन हो, मानी का मद गालन हो।
शुभ चार कोट हैं सुन्दर, अरु पाँच वेदिका मनहर।।
हैं आठ भूमियाँ अंतर, फिर गंध कुटी है अनन्तर।
श्री जिनवर..........

है धूलिसाल के अन्दर, क्षिति चैत्य प्रासाद है सुन्दर।
इक-इक जिनमंदिर अंतर, प्रासाद सुपञ्च अनन्तर।।
दो-दो हैं नाट्य शालाएँ, गुण गाती सुर बालाएँ।
श्री जिनवर..........

वेदी वेष्टित है उन्नत, हैं गोपुर द्वार समुन्नत।
निधि तोरण द्वार सजे हैं, द्वारे पर वाद्य बजे हैं।।
फिर स्वच्छ नीर युत खाई, दूजी भूमि कहलाई।
श्री जिनवर..........

हंसादि कलरव करते, कमलादि मनको हरते।
फिर लता भूमि कहलाई, पुष्पों से सजी सजाई।।
फिर द्वितीय कोट कहा है, गोपुर संयुक्त रहा है।
श्री जिनवर..........

फिर उपवन भूमि रही है, वृक्षों से सहित कही है।
चउ वृक्षों पर प्रतिमाएँ, चारो दिश शोभा पाएँ।।
वसु प्रातिहार्य सहित हैं सुन्दर, मणिमय दिखते हैं मनहर।
श्री जिनवर..........

फिर पंचम भूमि आए, जो ध्वज भूमि कहलाए।
फिर द्वितीय कोट सुनिर्मित, है गोपुर द्वार समन्वित।।
फिर छटवी भूमि आई, दश विधि सुरतरु युत गाई।
श्री जिनवर..........

प्रतिदिश सुरतरु सिद्धार्थ, सिद्धों की प्रतिमा धारक।
फिर सप्तम भूमि आवे, जो भवन भूमि कहलावे।।
स्तूप रत्न से निर्मित, होते जिनबिम्ब समन्वित।
श्री जिनवर..........

परकोटा स्फटिक मणि का, गोपुर है मरकत मणि का।
फिर मंडप भूमि आती, जन-जन के मन को भाती।।
जहाँ कोठे द्वादश बनते, श्रोता जिनवाणी सुनते।
श्री जिनवर..........

पंचम वेदी के अंतर, त्रय कटनी होती सुंदर।
पहली पर यक्ष हैं न्यारे, सिर धर्मचक्र को धारे।।
दूजी पर आठ ध्वजाएँ, नव निधि मंगल द्रव पाएँ।
श्री जिनवर..........

है गंध कुटी तीजी पर, शुभ कमल बना है मनहर।
ऊपर सिंहासन राजे, चउ अंगुल अधर विराजे।।

जिनवर के दर्शन पाकर, भवि तृप्त न हों गुण गाकर।
श्री जिनवर..........
हम जिनवर के गुण गाएँ, अपने सौभाग्य जगाएँ।
जिनपद में शीश झुकाएँ, जिनवर के पद को पाएँ।।
हम विशद ज्ञान को पाएँ, अरु विशद स्वयं हो जाएँ।
श्री जिनवर..........

दोहा : ब्रह्मा विष्णु महेश तुम, वीर बुद्ध तव नाम।
वीतराग विज्ञान तुम, करते 'विशद' प्रणाम।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्ताय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(वीर छंद)

श्रद्धा भक्ति सहित भव्य जो, समवशरण में आते हैं।
बिन माँगे ही नव निधियाँ अरु, रत्न सु चौदह पाते हैं।।
वह पाँचों कल्याणक पाते, होते धर्म चक्रधारी।
विशद ज्ञान को पाने वाले, सिद्ध शिला के अधिकारी।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

मानस्तम्भ सम्बन्धी सोपान वर्णन

चौपाई

विजय द्वार पूरब में भाई, आगे चौक रहा सुखदायी।
है सोपान श्रेष्ठ मनहारी, पूज रहे हम अतिशयकारी।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशायां विजय नामक द्वाराग्रे विद्यमान चतुष्कस्याग्रे सोपानसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

वैजयन्त माला सम जानो, फिर जयन्त आगे पहिचानो।
हो प्रवेश जिनगार में भाई, हम भी पूज रहे सुखदायी।।2।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षु चतुर्द्वाराणाम् अग्रे चतुष्कस्याग्रे चतुः सोपानसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बीस हजार सीढ़ियाँ जानो, समवशरण में भाई मानो।
एक हाथ जिसकी ऊँचाई, वृषभनाथ की सभा में भाई।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवस्य विंशतिसहस्रहस्तोच्च-एकहस्तायत-एककोश लम्ब सोपानसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण अनुपम है भाई, द्वादश योजन है सुखदायी।
आधा योजन घटता जाए, चौबीसों जिनवर जी पाए।।4।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशति तीर्थंकराणां यथाविधिहीनहीन सोपानसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चार हाथ का धनुष कहाया, पञ्च सहस्र ऊँचा कहलाया।
बीस हजार हाथ का जानो, समभूमि से जो पहिचानो।।5।।

ॐ ह्रीं चतुर्हस्तानाम् एकं धनुर्मत्वा मध्यभूमितः पंचसहस्रधनुः प्रमाणोच्च समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोनों ओर सीढ़ियाँ जानो, वेदी आगे मनहर मानो।
जीव सभी समभाव जगाते, प्रभु पद आके अर्घ्य चढ़ाते।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवस्य सार्धसप्तशतधनुःस्थल सोपान वेदिका संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वेदी रत्नमयी मनहारी, आगे बैठक है सुखकारी।
समवशरण की शोभा न्यारी, गुण गाते जग के नर-नारी।।7।।

ॐ ह्रीं वेदिकायाः नानाविधरचनासम्पन्नचतुष्के पीठसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

वेदी ऊपर कोट बताया, सूची युक्त गोल कहलाया।
कमल पाखुरी सुन्दर जानो, देवदर्श को खड़े हों मानो।।
जगमग ज्योति जले ज्यों भाई, जग जीवों की है सुखदायी।
सप्त सतक पंचाशत जानो, धनुष प्रमाण श्रेष्ठ पहिचानो।।8।।

ॐ ह्रीं वेदिकोपरि मूले सूची सप्तशत् पञ्चाशत् चापोपरि चूलिकास्थले लघुसूचीप्रमाणे गोलाकार कूट स्थित देवीदेवकृत जिनगुणगानसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर छतरी है मनहारी, मणिरत्नों की है शुभकारी।
जिनगृह गोल कलश है भाई, शोभा जिसकी कही न जाई।।
शुभ स्तम्भ सहित विष्ठर है, प्रथम रहा इसका अवसर है।
जिन भक्ति करने जो आते, जग वैभव शिवपद वह पाते।।9।।

ॐ ह्रीं ऊपरि कलशयुक्त छत्रिकायुक्त अधः स्तम्भसहित प्रथमविष्ठरसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय बैठक के शुभ द्वारे, चार कहे रत्नोयुत प्यारे।
प्रभु की शोभा लखकर सारे, फीके पड़ जाते हैं न्यारे।।
भक्त भावना लेकर आए, तव चरणों में शीश झुकाए।
ध्यान दीजिए हे त्रिपुरारी !, अर्चा हम करते मनहारी।।10।।

ॐ ह्रीं द्वयोः दिशयो सन्मुख त्रि-त्रिद्वारयुक्तेन तथाद्वयो दिशयोः सन्मुखैकैकद्वार-युक्तेन द्वितीयविष्ठरेण संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ द्वार हैं मंगलकारी, खम्बे आठ बने मनहारी।
गुम्बद तीन बनी हैं भाई, कलश दिखाते हैं प्रभुताई।।
धनद इन्द्र की आज्ञा पाते, समवशरण तब श्रेष्ठ बनाते।
मानो स्वर्ग का वैभव सारा, समवशरण में यहाँ उतारा।।11।।

ॐ ह्रीं अष्टाष्टस्तम्भयुक्तानां त्रित्रिगुमठी नामुपरि एकादश/एकादश कलशयुक्तानाम् अष्टाष्ट द्वारयुक्त वेदिका-संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजी भूमि है मनहारी, वेदी ऊपर बैठक न्यारी।
जिसकी शोभा कही न जाए, गणधर इन्द्र शरण में आए।।12।।

ॐ ह्रीं वेदिकोपरि बहुविष्ठरसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊँचे पञ्च सहस बरसावें, प्राणी दर्शन कर हर्षावें।
पहली भू में विजय द्वारे, चार चौक हैं अतिशय न्यारे।।13।।

ॐ ह्रीं समभूमितः पञ्च सहसचापो तस्य विजयद्वारस्य अग्रेचतुष्क (चौक) संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

बरसावे चऊ चौक हैं, मणिमय रजत महान।
विपुल चौक चित्रित परम, कौन करे गुणगान।।14।।

ॐ ह्रीं चतुष्कस्याग्रे पार्श्वद्वये विष्ठरेषु मध्ये नानाविधरचनायुक्त चतुष्कसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बैठक और सिवान है, मणिमय वेदि प्रधान।
छज्जे तकिया परम दल, परदा श्रेष्ठ महान।।15।।

ॐ ह्रीं विष्ठर बैठक सोपानवेदिकामत्तवारणाबारक शोभासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सज्जित बन्धनवार से, रत्नमाल युत द्वार।
ध्वज फहराएँ चतुर्दिक, अतिशय मंगलकार।।16।।

ॐ ह्रीं रत्नमुक्तानिर्मित सकम्पबहुध्वजासंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव करें यशगान तव, मानव ज्ञान बखान।
नृत्य गान करते सभी, भक्ति भाव से आन।।17।।

ॐ ह्रीं पूर्वोक्त शोभासम्पन्नविष्ठरेषु देवीदेवनरनारीकृत जिनराज गुणगानसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीढ़ी चढ़ते न थकें, करें जरा न देर।
देवोकृत अतिशय रहा, कर्म करें सब ढेर।।
इन्द्र नीलमणि की रही, शिला गोल मनहार।
बारह योजन वृषभ जिन, का है मंगलकार।।18।।

ॐ ह्रीं जिनातिशयतः यत्सोपानानि खेदं बिना क्षणमात्र चटनसमर्थानि एवम्भूतनीलमणि-निर्मित द्वादशयोजनवर्तुलशिला संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण जिन तेइस के, हीन-हीन क्रम जान।
प्रतिबिम्बित हो शिला में, सर्व विभूति आन।।19।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशतितीर्थंकराणाम् उत्तोत्तरहीनरचना परिणाम विशिष्टशिला-संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में कोट है, सभा के चारों ओर।
मानुषोत्तर गिर ज्यों रहा, भक्ति करें कर जोर।।20।।

ॐ ह्रीं धूलिशाल दुर्ग-संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

रत्न चूरकर इन्द्र शुभ, पञ्च वर्ण में श्रेष्ठ।
इन्द्र धनुष की कांतियुत, पूरें चौक यथेष्ठ।।21।।

ॐ ह्रीं पंचविधचूर्णनिर्मित-गगनविसारिज्योतिर्युक्त धूलिसाल दुर्गसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु के तन से चौगुना, कोट रहा मनहार।
मूल भाग द्वय गुणित है, शांति का आधार।।22।।

ॐ ह्रीं जिनशरीरतः चतुर्गुणोच्च-मूलभागद्वयस्थूल उपरिक्रमशः सूक्ष्मधूलिसालदुर्ग (कोट) संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चार द्वार चऊ कोट हैं, विजयादि शुभ नाम।
श्रेष्ठ कंगूरे शोभते, अनुपम आठों याम।।23।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिश कंगूरागुरजबैठकसंयुक्त पर्दासहित धूलिसालदुर्ग (कोट) संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक के चित्र बने कई, जिनसे शिक्षा पाते जीव।
दुर्गति मार्ग छोड़कर प्राणी, मुक्ति पथ अपनाएँ सजीव।।24।।

ॐ ह्रीं नानाविधिचित्रावलिसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्न शिला अतिशय बनी, सीढ़ी सीधी जान।
चार गली दिश चार में, वृषभदेव की मान।।
एक कोष चौड़ी रही, लम्बी तेरह कोष।
दो वेदी के बीच में, गली बनी निर्दोष।।25।।

ॐ ह्रीं वृषभदेव क्रोशैकायतत्रयोविंशति क्रोशलम्बासु सोपानचतुर्गलिषु उभयतः स्फटिकमणिमयवेदिका संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हर वेदी के मध्य में, है चौड़ा स्थान।
अर्चा कर जिनदेव की, करें जीव गुणगान।।
चौड़ी वेदी सार्धशत्, चाप धनुष सम जान।
वेदी गली है एकसी, तेइस जिन की मान।।26।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशतितीर्थंकराणाम् यथागमक्रमहीन वेदिका संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्य छन्द)

निर्मल भाव हुए हैं प्रभु के दर्श से, मन भी पावन हुआ चरण-स्पर्श से।
लम्बी वेदी गली एक ही जानिए, तेइसकी अनुक्रम से हानि मानिए।।27।।

ॐ ह्रीं चतुर्वीथिकानांमध्ये अन्तरालभूमौ चतुर्णां दुर्गाणां पंचानां वेदिकानाम् अन्तरालेऽष्टानां भूमिशिलानां पर्यन्ते धूलिशालदुर्ग संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चार गली के मध्य, चार अन्तर कहे,
चार कोट अरु पञ्च, वेदिका भी रहे।
इन नौ के अन्तर, अष्ट भूमियाँ जानिए,
अन्त में धूलिसाल कोट शुभ मानिए।।28।।

ॐ ह्रीं जिनदेहाच्चतुर्गुणोच्च भित्तिकासमायताभिः पंचवेदिकाभिः उपर्युपरि क्रमहीनायाम तथोच्चदुर्गेश्च संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोट के नीचे वेदी मनहर जानिए, कोट चौगुना जिनवर से पहिचानिए।
दर्श आपका करने की है भावना, निज स्वरूप को पाएँ है यह कामना।।

(चामर छन्द)

मणियों से खचित है, स्वर्ण मयी वेदियाँ।
शोभित कंगूरों से, नृत्य करें देवियाँ।।
जहाँ ध्वज फहराते, अतिशय मन भावने।
दर्शन प्रभु के हैं, मन को लुभावने।।29।।

ॐ ह्रीं कंगूरा मन्दिर ध्वजा सुशोभिताभिः कंचनवर्णपंचवेदिकाभिः संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चाल छन्द)

शुभ चैत्य खातिका जानो, अरु लता उद्यान भी मानो।
ध्वज कल्प वृक्ष मनहारी, गृह गण भू अष्टम प्यारी।।
नर सुर पशु भी आते हैं, उपदेशामृत पाते हैं।
अब शरण आपकी आए, दर्शन के भाव बनाए।।30।।

ॐ ह्रीं पंचवेदिका-चतुर्दुर्गाष्टान्तरालेषु नानाविधिचित्ररचना संयुक्त- समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चऊ कोट बने मनहारी, हैं पञ्च वेदियाँ प्यारी।
नव द्वार बने सुखदायी, चउ दिश के छत्तिस भाई।।
नर सुर पशु भी आते हैं, उपदेशामृत पाते हैं।
अब शरण आपकी आए, दर्शन के भाव बनाए।।31।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षु चतुर्दुर्ग-पंचवेदिका-षट्त्रिंशद्द्वार संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

प्रथम कोट में वेदी जानो, प्रथम गली में द्वार बखानो।
द्वितीयादि भी जानो भाई, भवि जीवों को है सुखदायी।।
सुर नर पशु दर्शन को आते, प्रभु का उपदेशामृत पाते।
हम भी शरण आपकी आए, जिन दर्शन करके हर्षाए।।32।।

ॐ ह्रीं प्रथमदुर्ग-प्रथमवेदिकाद्वाराणां मध्ये प्रथमवीथिकाभूमि भिन्नद्वाराणां मध्ये द्वितीयादिवीथिकाभूमि संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूमि आठ गली हैं भाई, पार्श्व वेदिका है सुखदायी।
रत्नजड़ित शुभ द्वार कहाए, जिनकी महिमा कही न जाए।।
सुर नर पशु दर्शन को आते, प्रभु का उपदेशामृत पाते।
हम भी शरण आपकी आए, जिन दर्शन करके हर्षाए।।33।।

ॐ ह्रीं अष्टभूमिसम्बन्धिनीनाम् अष्टवीथिकानाम् उभयपार्श्वे अनेकबज्रमय-कपाटयुक्त स्फटिकनिर्मित वेदिकाद्वारसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गलियों में वेदी मनहारी, दर्शन करते हैं नर-नारी।
बैठक में जा बैठे सारे, बोल रहे प्रभु के जयकारे।।34।।

ॐ ह्रीं अभ्यान्तरबीथिकाद्वारसंयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धूलि शाल कंचन सा जानो, मणिमय चउ द्वारे भी मानो।
जगमग होते हैं मनहारी, शोभा दिखती विस्मयकारी ।।35 ।।

ॐ ह्रीं स्वर्णमयचतुःद्वारयुक्तधूलिशालदुर्ग संयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोट दोय चउ वेदी भाई, चौबिस द्वार रहे सुखदायी।
श्वेत रंग में शोभा पाते, जो लोगों के मन को भाते ।।36 ।।

ॐ ह्रीं रौप्यमयचतुर्विंशतिद्वारयुक्त दुर्गद्वय संयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोट स्फटिक के शुभकारी, अष्ट द्वार उनमें मनहारी।
हरे रंग के द्वारे भाई, दिखा रहे प्रभु की प्रभुताई ।।37 ।।

ॐ ह्रीं स्फटिकमयदुर्गद्वाराभ्यन्तरवेदिकाष्टद्वारहरिद्वर्णकपाट संयुक्त– समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चाल -छन्द)

द्वादश गुणे प्रभु से भाई, द्वारे छत्तिस सुखदायी।
है चार गुणी चौड़ाई, जिन के शरीर से भाई ।।38 ।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनदेहतः द्वादशगुणितोच्च–चतुर्गुणआयतषट्त्रिंशद् द्वारसंयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वय ओर द्वार के भाई, है बैठक शुभ सुखदाई।
द्वारों पर बैठक सोहें, ऊपर खम्भे मन मोहें ।।39।।

ॐ ह्रीं द्वाराणाम् उभयपार्श्वे मुकुट्युक्तविष्ठरसंयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खम्भे पर गुम्बद जानो, शुभ छोटी–छोटी मानो।
कलशा ऊपर सुखकारी, फहराए ध्वजा मनहारी ।।40 ।।

ॐ ह्रीं जिनगुणगायकदेवीदेवविभूषित क्षुद्रघण्टिकायुक्तानेक गुमठी विशिष्टद्वार संयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नों के तोरण सोहें, कई पुष्प माल मन मोहें।
घंटों की पंक्ति भाई, शोभित होती सुखदायी ।।41 ।।

ॐ ह्रीं विविधरत्नमाल–पुष्पमाल–क्षुद्रघण्टिका–पंक्तियुक्तद्वार–संयुक्त– समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाटक की छटा है न्यारी, है रत्नजड़ित मनहारी।
नाना विध चित्र बने हैं, रूमी अरु कड़े घने हैं।
हैं वृक्षाकार निराले, फल–फूल शोभते आले ।।
सुर–नर लखकर हर्षाते, प्रभु की महिमा को गाते ।।42 ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तद्वार संयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शम्भू छन्द)

नव द्वारों में द्वारपाल हैं, त्रिद्वारों में ज्योतिष देव।
दो द्वारों में व्यंतर वासी, दो में भवनालय के एव ।।
अस्त्र–शस्त्र से शोभित होते, वैमानिक सुर द्वार खड़े।
आवश्यकता नहीं है इनकी, फिर भी वैभव श्रेष्ठ बढ़े ।।43 ।।

ॐ ह्रीं विविधानेकद्वारपाल संयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छत्र चँवर दर्पण ध्वज झारी, पंखा ठोना कलश महान।
मंगल द्रव्य रहे मंगलमय, समवशरण में अष्ट प्रधान ।।
संख्या एक सौ आठ–आठ शुभ, प्रतिद्वारे पर शोभ रहे।
तीर्थंकर जिन समवशरण में, दिव्य ध्वनि में यही कहे ।।44 ।।

ॐ ह्रीं एकलक्षचतुर्विंशतिसहस्रचतुःशतषोडशमंगलद्रव्य विभूषित षट्त्रिंशद्द्वार संयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाकाल पाण्डु पिंगल शुभ, रत्न शंख नैसर्प महान।
पदम काल माण्डव नव भाई, निधियाँ जग में रहीं प्रधान ।।

संख्या एक सौ आठ-आठ शुभ, प्रतिद्वारे पर शोभ रही।
तीर्थंकर जिन समवशरण में, दिव्य ध्वनि में यही कही।।
सुर-नर पशुओं को निधियाँ यह, अन्न वस्त्र आभूषण दान।
आयुध बर्तन वाद्य आदि शुभ, वाहन गृह भी करें प्रदान।।
ऋषि मुनि गणधर जहाँ राजते, नहीं सौख्य की जिनको चाह।
भक्ति भाव से अर्चा करते, चाह रहे मुक्ति की राह।।45।।

ॐ ह्रीं एकलक्षोनचत्वारिंशत्सहस्रनवशताष्टासीति निधियुक्त-षट्त्रिंशद्द्वार संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छत्तिस द्वार बने इक दिश में, एक सौ चालीस चारों ओर।
परदे स्वर्णमयी कंचनमय, करें धूप घट भाव-विभोर।।
मेघों जैसी छटा धूम से, गगन मध्य है अपरम्पार।
भ्रमर समान झूमते प्राणी, बोलें प्रभु की जय-जयकार।।46।।

ॐ ह्रीं गगनव्यापकधूम्रघटायुक्त-धूपघटयुक्तद्वार संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम गली चौथी अरु छटवी, गली के अन्तर में मनहार।
अनुपम बनी नृत्यशालाएँ, जिनकी महिमा अपरम्पार।।
भाँति-भाँति के नृत्य देवियाँ, ऊपर-नीचे चारों ओर।
करती हैं गुणगान प्रभु का, पुलकित होकर भाव-विभोर।।47।।

ॐ ह्रीं प्रथमतुर्यषष्ठवीथिकानाम् अन्तराले नृत्यशालायुक्तपार्श्वद्वयसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम गली के दोय पार्श्व में, तिखने बने हैं शोभादार।
एक नृत्य शाला में बत्तिस, बने अखाड़े शुभ मनहार।।
रखे धूप घट दो-दो सुन्दर, नाचें बत्तिस बालाएँ।
एक सहस्र चौबीस देवियाँ, पहने हैं शुभ मालाएँ।।

चतुर्दिशा में सोलह शाला, बनी हुईं हैं शुभ मनहार।
सोलह सहस तीन सौ भाई, चौरासी हैं मंगलकार।।48।।

ॐ ह्रीं षोडशनृत्यशालासहित चतुर्दिशाचतुद्वार संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौथी गली में कल्पवासिनी, करें देवियाँ नृत्य महान।
एक सहस चौबीस पार्श्व इक, चार पार्श्व का जोड़ बखान।।
चार हजार छियानवे भाई, चार दिशा का योग महान।
सोलह सहस तीन सौ भाई, चौरासी का है गुणगान।।49।।

ॐ ह्रीं कल्पवासिनी नृत्ययुक्त चतुर्थान्तरवीथिकायाम् पूर्ववत् नृत्यशालासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छठवी अन्तर गली में भाई, नाट्यशालाएँ बत्तिस जान।
पचखाने में ज्योतिषवासी, करें देवियाँ नृत्य महान।।
बत्तिस सहस सात सौ अड़सठ, करें ताल से बारम्बार।
परम प्रीति से नाचे गावें, वर्णन जानो यह मनहार।।50।।

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशत् नृत्यशालायुक्तषष्ठान्तरवीथिका संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पैंसठ सहस पाँच सौ छत्तिस, सुर बालाएँ जहाँ महान।
चौसठ शालाओं में अनुपम, नृत्य करें जिन का गुणगान।।51।।

ॐ ह्रीं प्रथमचतुर्थमार्गस्थअन्तरवीथिकायांचतुषष्ठिनृत्यशालासहितद्वार-संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरपति चढ़कर के सिवान पर, धूलिसाल शुभ कोट प्रधान।
विजय द्वार के अन्दर जाकर, पूजें मानस्तम्भ महान।। ।।52।।

ॐ ह्रीं पूर्वदिशायाः मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रप्रतिमा पूजा संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व दिशा - मानस्तम्भ पूजा

(स्थापना)

धूलिसाल के अभ्यन्तर की, वीथी में चारों ही ओर।
मानस्तम्भ रत्नमणि निर्मित, करते मन को भाव विभोर।।
हर स्तम्भ की चतुर्दिशा में, प्रतिमाएँ शोभित हैं चार।
आह्वानन कर वन्दन करते, उनके चरणों बारम्बार।।
मान गलित हो जाए मेरा, प्राप्त होय सम्यक् श्रद्धान।
शीघ्र कर्म का नाश करें हम, प्रगट होय शुभ केवल ज्ञान।।

दोहा- पूज रहे हम भाव से, पूर्व मानस्तम्भ।
सम्यक् श्रद्धान् प्राप्त हो, नशे मान छल दम्भ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र मम् सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल-टप्पा)

प्रासुक करके निर्मल जल की, भर लाए झारी।
जन्म मृत्यु का रोग नशाने, यह मंगलकारी।।
प्रभु के पद में शुभकारी।
त्रयधारा देते चरणों में, हम अतिशयकारी।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

परम सुगन्धित चन्दन केसर, अतिशय गुणकारी।
भव आताप नशाने लाए, हम मंगलकारी।।
प्रभु के पद में शुभकारी।
चरण कमल में चर्चित करके, यह अतिशयकारी।।2।।

विशद समवशरण महामण्डल विधान

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

परम सुगन्धित अक्षय अक्षत, पावन मनहारी।
अक्षय पद को पाने लाये, यह मंगलकारी।।
प्रभु के पद में शुभकारी।
अक्षय पद हो प्राप्त हमें प्रभु, शुभ अतिशयकारी।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

भाँति-भाँति के पुष्प मनोहर, अति खुशबूधारी।
चरणों चढ़ा रहे हैं अनुपम, यह मंगलकारी।।
प्रभु के पद में शुभकारी।
कामबाण विध्वंश होय मम्, हे अतिशयधारी !।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ अनुपम नैवेद्य बनाकर, भर लाए थारी।
क्षुधारोग के नाश हेतु हम, यह मंगलकारी।।
प्रभु के पद में शुभकारी।
तीन लोक में नाथ कहे हैं, अतिशय के धारी।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जलते हुए दीप लाए हम, अतिशय मनहारी।
मोह अंध के नाश हेतु शुभ, यह मंगलकारी।।
प्रभु के पद में शुभकारी।
जग को जिन सन्मार्ग दिखाते, शुभ अतिशयकारी।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशांगी जला रहे यह, अतिशय शुभकारी।
अष्ट कर्म के नाश हेतु हम, शुभ मंगलकारी।।

प्रभु के पद में शुभकारी।
कर्म नष्ट हो जाएँ हमारे, हे जिन अविकारी।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ सरस फल हम यह लाये, अति विस्मयकारी।
मोक्ष महाफल प्राप्त होय शुभ, अति मंगलकारी।।
प्रभु के पद में शुभकारी।
मोक्ष मार्ग के अतिशय साधक, हे जिन अविकारी।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बनाकर, लाए यह थारी।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें हे, जिनवर अविकारी।।
प्रभु के पद में शुभकारी।
मोक्ष मार्ग के अतिशय साधक, हे जिन अविकारी।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण दिशा - मानस्तम्भ पूजा

(स्थापना)

मानस्तम्भ की महिमा न्यारी, देखत लगती प्यारी-प्यारी।
मानस्तम्भ दक्षिण के भाई, सुर-नर-मुनि पूजें सुखदायी।।
हम पूजा के भाग्य जगाए, अष्ट द्रव्य से पूज रचाए।
चारों दिश जिनबिम्ब कहाए, आह्वानन् करने हम आए।।

दोहा- पूज रहे हम भाव से, दक्षिण मानस्तम्भ।
सम्यक् श्रद्धा प्राप्त हो, नशे मान छल दम्भ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट्सन्निधिकरणम्।

(चाल-टप्पा)

भाव सहित जो नीर चढ़ाएँ, जन्म-जरा का रोग नशाएँ।
सुख-शांति-सौभाग्य बढ़ाएँ, अनुक्रम से शिवलक्ष्मी पाएँ।।1।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केसर चंदन श्रेष्ठ चढ़ाते, अपना भव आताप नशाते।
सुख-शांति-सौभाग्य बढ़ाएँ, अनुक्रम से शिवलक्ष्मी पाएँ।।2।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत यहाँ चढ़ाने लाए, अक्षय पद पाने हम आए।
सुख-शांति-सौभाग्य बढ़ाएँ, अनुक्रम से शिवलक्ष्मी पाएँ।।3।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प सुगन्धित चुनकर लाए, कामबाण मेरा नश जाए।
सुख-शांति-सौभाग्य बढ़ाएँ, अनुक्रम से शिवलक्ष्मी पाएँ।।4।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे यह नैवेद्य बनाए, क्षुधा नशाने को हम आए।
सुख-शांति-सौभाग्य बढ़ाएँ, अनुक्रम से शिवलक्ष्मी पाएँ।।5।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप जलाकर आरति गाएँ, मोह महातम दूर भगाएँ।
सुख-शांति-सौभाग्य बढ़ाएँ, अनुक्रम से शिवलक्ष्मी पाएँ।।6।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि में हम धूप जलाएँ, अपने आठों कर्म नशाएँ।
सुख-शांति-सौभाग्य बढ़ाएँ, अनुक्रम से शिवलक्ष्मी पाएँ।।7।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे यह फल सरस मँगाये, मोक्ष महाफल पाने आये।
सुख-शांति-सौभाग्य बढ़ाएँ, अनुक्रम से शिवलक्ष्मी पाएँ।।8।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाएँ, पद अनर्घ हम भी पा जाएँ।
सुख-शांति-सौभाग्य बढ़ाएँ, अनुक्रम से शिवलक्ष्मी पाएँ।।9।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिशा - मानस्तम्भ पूजा

(स्थापना)

धूलिसाल के मध्य सुमणिमय, चउदिश सुन्दर वीथी जान।
वीथी मध्य सुमानस्तम्भ है, समवशरण में आभावान।।
मानस्तम्भों के दर्शन से, मान गलित क्षण में हो जाय।
मानस्तम्भ जिनबिम्ब अर्चना, किए कर्म शत्रु नश जाय।।

दोहा- पूज रहे हम भाव से, पश्चिम मानस्तम्भ।
सम्यक् श्रद्धा प्राप्त हो, नशे मान छल दम्भ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(गीता छन्द)

मोह में फँसकर प्रभो ! नित, किया कितना पाप है।
कर्म का बंधन पड़ा यह, पाप का अभिशाप है।।
जन्म-मृत्यु अरु जरा का, रोग हरने आये हैं।
स्वर्ण झारी में मनोहर, नीर निर्मल लाये हैं।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

पाप के संताप से बहु, कर्म का अर्जन किया।
देव पूजा और भक्ति, नहीं जिन अर्चन किया।।
विभव का संताप हरने, शरण में हम आये हैं।
मलयगिरि का श्रेष्ठ चन्दन, सरस घिसकर लाये हैं।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राप्त करके पद अनेकों, कर्म से बँधते रहे।
उन पदों को प्राप्त करने, में अनेकों दुख सहे।।
सुपद अक्षय प्राप्त करने, हम शरण में आये हैं।
धवल अक्षत थाल में धर, हम चढ़ाने लाये हैं।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम की ही कामना हम, नित्य प्रति करते रहे।
विषय भोगों में रमे अरु, व्यर्थ भव हरते रहे।।
काम बाधा नाश करने, हम शरण में आये हैं।
पुष्प ले पुष्पित मनोहर, हम चढ़ाने लाये हैं।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा बाधायें हमेशा, जीव को व्याकुल करें।
व्यथित मन को नित करें जो, सर्व सुख-शांति हरें।।
क्षुधा रोग विनाश करने, हम शरण में आये हैं।
नैवेद्य यह चरणों चढ़ाने, थाल में भर लाये हैं।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान की शुभ रोशनी से, मोहतम का नाश हो।
कर्म का आश्रव कराए, चतुर्गति में वास हो।।

मोहतम का नाश करने, हम शरण में आये हैं।
दीप यह अनुपम जलाकर, हम चढ़ाने लाये हैं।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्मों ने हमेशा, घात चेतन का किया।
आत्मा की शक्ति का न, भान होने ही दिया।।
अष्ट कर्मों को नशाने, हम शरण में आये हैं।
धूप अग्नि में जलाने, हेतु हम यह लाये हैं।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल अनेकों खाये निष्फल, हो गये हैं वह सभी।
मोक्ष फल की भावना, हमने नहीं भाई कभी।।
प्राप्त करने मोक्षफल शुभ, हम शरण में आये हैं।
फल अनेकों थाल में भर, हम चढ़ाने लाये हैं।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद कोई शाश्वत रहे न, प्राप्त हमने जो किये।
इन पदों को प्राप्त करके, लोक में हम भी जिये।।
पद रहा शाश्वत जहाँ में, प्राप्त करने आये हैं।
अष्ट द्रव्यों का मनोहर, अर्घ्य देने लाये हैं।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिशा - मानस्तम्भ पूजा

(स्थापना)

धूलिसाल के मध्य सुमणिमय, चउदिश सुन्दर वीथी जान।
वीथी मध्य सुमानस्तम्भ है, समवशरण में आभावान।।
मानस्तम्भों के दर्शन से, मान गलित क्षण में हो जाय।
मानस्तम्भ जिनबिम्ब अर्चना, किए कर्म शत्रु नश जाय।।

दोहा- पूज रहे हम भाव से, उत्तर मान स्तम्भ।
सम्यक् श्रद्धा प्राप्त हो, नशे मान छल दम्भ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(सुखमा छन्द)

जन्मादि सब रोग नशाएँ, निर्मल यह शुभ नीर चढ़ाएँ।
जीवन हो यह मंगलकारी, पावें हम शिवपद अविकारी।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव सन्ताप मेरा नश जाए, चन्दन श्रेष्ठ चढ़ाने लाए।
जीवन हो यह मंगलकारी, पावें हम शिवपद अविकारी।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पद हमको मिल जाए, अक्षत यहाँ चढ़ाने लाए।
जीवन हो यह मंगलकारी, पावें हम शिवपद अविकारी।।3।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम नाश करने हम आए, सुरभित पुष्प चढ़ाने लाए।
जीवन हो यह मंगलकारी, पावें हम शिवपद अविकारी।।4।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

व्याधि क्षुधा नशाने आए, शुभ नैवेद्य चढ़ाने लाए।
जीवन हो यह मंगलकारी, पावें हम शिवपद अविकारी।।5।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह अंध मेरा नश जाए, मणिमय दीप जलाकर लाए।
जीवन हो यह मंगलकारी, पावें हम शिवपद अविकारी ।।6।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों कर्म नशाने आए, सुरभित धूप जलाने लाए।
जीवन हो यह मंगलकारी, पावें हम शिवपद अविकारी ।।7।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मोक्ष महाफल हम पा जाएँ, सरस श्रेष्ठ फल यहाँ चढ़ाएँ।
जीवन हो यह मंगलकारी, पावें हम शिवपद अविकारी ।।8।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद अनर्घ पाने हम आए, अर्घ्य चढ़ाने को हम लाए।
जीवन हो यह मंगलकारी, पावें हम शिवपद अविकारी ।।9।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- समवशरण में चतुर्दिश, बने मानस्तम्भ।
गाते हम जयमालिका, उनमें जो जिनबिम्ब ।।

(चौपाई)

जय-जय समवशरण मनहारी, शोभा जिसकी अतिशयकारी।
मानस्तम्भ हैं विस्मयकारी, चतुर्दिशा में मंगलकारी ।।
दर्शन चतुर्दिशा में होवें, सबके मन का कालुष खोवें।
प्रतिमाएँ अतिशय शुभकारी, वीतरागमय हैं अविकारी ।।
गलित मान मानी का होवे, अज्ञानी की जड़ता खोवे।
जिनवर की है जो ऊँचाई, बारहगुणी हैं उसमें भाई ।।
बारह योजन से दिख जाते, बीस योजन प्रकाश फैलाते।

तिय कोटों से घिरे हैं भाई, गोपुर चार बने सुखदायी ।।
अभ्यन्तर बावड़ियाँ जानो, उपवन देव सहित पहिचानो।
वरुण कुबेर सोम यह भाई, लोकपाल चऊदिक् सुखदायी ।।
कटनी तीन बीच में जानो, वैडूर्य स्वर्ण रत्नमय मानो।
द्वय कटनी पर द्रव्य सजाते, मंगल द्रव्य ध्वजादि पाते ।।
मानस्तम्भ तीजी पर जानो, मूल भाग वज्रमय मानो।
मूल भाग चौकोर कहाया, ऊपर गोलाकार बताया ।।
पहलू दो हजार कहलाए, मनहर चमकदार बतलाए।
छत्र चँवर घंटा किंकणियाँ, रत्नहार शोभित हैं मणियाँ ।।
प्रातिहार्य सोहें वसु भाई, जिनकी महिमा कही न जाई।
चतुर्दिशा में दर्शन मिलते, हृदय कमल भव्यों के खिलते ।।
क्षीरोदधि से जल भर लाते, बिम्बों का अभिषेक कराते।
सुर-नर अष्ट द्रव्य ले आवें, पूजा करके नाचे-गावें ।।
बावड़िया पूरब में जानो, नन्दीमति नन्दोत्तर मानो ।
नंदी नन्दीघोषा भाई, कमल कुमुदमय हैं सुखदायी ।।
दक्षिण मानस्तम्भ में जानो, विजय और वैजयन्त भी मानो।
जय और अपराजित भी सोहें, जो भव्यों के मन को मोहें ।।
पश्चिम में बावड़ियाँ भाई, सुप्रबुद्ध कुमुदा कहलाई।
अरु पुण्डरीक अशोका जानो, निर्मल नीर कुमुदयुत मानो ।।
प्रभंकरा उत्तर में जानो, सुप्रतिबद्धा भी पहिचानो।
वापी है महानन्दा भाई, हृदया-नन्दी भी सुखदायी ।।
मणिमय सीढ़ी इनमें जानो, द्वय बाजू द्वय कुण्ड बखानो।
सुर-नर-पशु कुण्डों में जावें, पग धूलि धो शुद्धि पावें ।।
बावड़िया सोलह ये जानो, महिमा अतिशय इनकी मानो।
सारस हंस बतख कई भाई, कलरव करते हैं सुखदायी ।।

फूल खिले हैं अतिशयकारी, श्रेष्ठ रहे हैं जो मनहारी।
धन्य घड़ी दिवस है न्यारा, जागा है सौभाग्य हमारा।।
मिले प्रभु का दर्शन प्यारा, चरण-शरण का मिले सहारा।

दोहा- समवशरण जिनदेव के, आगे मानस्तम्भ।
दर्शन करके नाश हों, 'विशद' मान छल दम्भ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्सम्बन्धि मानस्तम्भ स्थित जिन प्रतिमाभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव्य जीव जो भक्ति भाव से, कल्पतरु पूजा करते।
पुण्य योग से भव-भव के वह, अपने सारे दुख हरते।।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष यह, कल्याणक पाँचों पाते।
'विशद' ज्ञान को पाने वाले, अनुक्रम से शिवपुर जाते।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

प्रथम चैत्य प्रसाद भूमि वर्णन

(चौपाई)

प्रथम भूमि प्रासाद कहाई, योजन सहस गणधर ने गाई।
प्रथम कोट के आगे भाई, वेदी प्रथम रही सुखदाई।।
चैत्य भूमि को मध्य में जानो, जिनबिम्बों से शोभित मानो।
पूजा पाठ रचाने आए, भाव सहित हमनें गुण गाए।।1।।

ॐ ह्रीं प्रथम गली द्वारोभयपार्श्वभागे अन्तर्गलीमध्ये चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम कोट वेदी प्रथम, दो-दो भाव महान।
चैत्य भूमि इस मध्य में, बाईस भाग प्रमाण।।2।।

ॐ ह्रीं साल वेदी चैत्य मंदिर भूमि वलय व्यास संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आजू-बाजू मंदिर गाए, पाँच-पाँच जिन भवन कहाए।
वायव अरु ईशान में भाई, जिन भवनों में जिन सुखदायी।।3।।

ॐ ह्रीं चतुर्विदिशासु पंचपंचमन्दिरमध्य जिनमन्दिर संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वलय व्यास भी भाई जानो, वायव्य दिश में प्रभु को मानो।
भक्ति कर ज्ञानी सुख पाएँ, ज्ञानी आतम ध्यान लगाएँ।।4।।

ॐ ह्रीं वायव्यदिशायां वलयव्यासयुक्तचैत्यभूमि संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्यभूमि के मंदिर भाई, वृक्ष बावड़ी में सुखदायी।
रचना देख सभी सुख पावें, खचर देव देवी जो आवें।।5।।

ॐ ह्रीं सरोवरवापिका तालवृक्षयुक्त चैत्यभूमि मन्दिर संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सार सरोवर श्रेष्ठ वापिका, बैठक के अन्दर की लतिका।
श्रेष्ठ सीढ़ियाँ चढ़कर जाते, फिर जिनेन्द्र के दर्शन पाते।।6।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि सरोवरवापिका सोपानविष्ठर संयुक्त चैत्य मंदिर समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी पर छतरी भी जानो, चार खम्भ मंगलमय मानो।
शिखर पे कलश ध्वज फहराए, जिन मंदिर अतिशोभा पाए।।7।।

ॐ ह्रीं वापिकाया कोणस्थस्तम्भेषु शिखरध्वजाकलशयुक्त चैत्यमन्दिर स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वृक्ष सघन अतिशोभा पाएँ, षट् ऋतु के फल-फूल खिलाएँ।
श्री जिन शोभित हैं अविकारी, ध्यानमग्न हैं शोभा न्यारी।।8।।

ॐ ह्रीं षड्ऋतुफलफूलयुक्त श्रेणीबद्ध वृक्ष चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वृक्षों की शोभा सुखदायी, मन्द पवन जिनवास में भाई।
प्रभु जहाँ पर ध्यान लगाएँ, प्रकृति शोभा वहाँ बढ़ाएँ।।9।।

ॐ ह्रीं अनेकशाखासहित वृक्षशोभितभूमि चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

वृक्षों के नीचे शिला, चन्द्र कान्ति सम श्रेष्ठ।
संघ सहित मुनिवर जहाँ, प्राणी झुकें यथेष्ठ।।10।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमिवृक्षतलेषु अनेकशिलासु दिगम्बरमुनिसमूहसहित चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दया आदि गुण के धनी, ज्ञान ध्यान के कोष।
चैत्यभूमि में शोभते, दर्शन हों निर्दोष।।11।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि दिगम्बर मुनिसंयुक्त चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान प्रकट कर ध्यान से, दिया जगत उपदेश।
मुनि दर्शन अर्चा किए, मन के नशे क्लेश।।12।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि शिलासु द्विविध धर्मोपदेशक दिगम्बरयति संयुक्त चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् तप से कर्म भू, करते पूर्ण विनाश।
ज्ञान ध्यान वैराग्य से, चित् का करें प्रकाश।।13।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि कर्मध्वंसक दिगम्बर यति संयुक्त चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ण रत्नमय द्वार पर, सुन्दर वन्दनवार।
गोल महल छज्जे सुखद, शोभित हैं मनहार।।14।।

ॐ ह्रीं अनेक शोभा संयुक्त चैत्यभूमिस्थ पंच मन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में चित्र कई, शिक्षा के आधार।
जिनवर के दर्शन करें, पावें ज्ञान अपार।।15।।

ॐ ह्रीं अनेक रचनासंयुक्त चैत्यभूमि मन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्य भूमि पूजन

(चैत्यभूमि चतुर्दिक विदिशा बिम्ब स्थापन)

चैत्य भूमि ईशान में, हैं जिनबिम्ब महान्।
अर्चा करने के लिए, करते हम आह्वान।।1।।

अथ ईशान दिशाचैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना।

चैत्य भूमि आग्नेय में, हैं जिनबिम्ब महान्।
अर्चा करने के लिए, करते हम आह्वान।।2।।

अथ आग्नेय दिशाचैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना।

चैत्य भूमि नैऋत्य में, हैं जिनबिम्ब महान्।
अर्चा करने के लिए, करते हम आह्वान।।3।।

अथ नैऋत्य दिशाचैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना।

चैत्य भूमि वायव्य में, हैं जिनबिम्ब महान्।
अर्चा करने के लिए, करते हम आह्वान।।4।।

अथ वायव्य दिशाचैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना।

चैत्य प्रासाद भूमि पूजा

(स्थापना)

धूलिसाल के आभ्यन्तर में, प्रथम भूमि है चैत्य प्रासाद।
पाँच-पाँच प्रासाद एक इक, जिन मन्दिर अन्तर के बाद।।
बारह गुणे हैं तीर्थंकर की, ऊँचाई से अतिशयकार।
आह्वानन जिनबिम्ब जिनालय, का हम करते बारम्बार।।

समवशरण में दिव्य जिनालय, शोभित होते महिमावान।
जिनबिम्बों की महिमा अनुपम, जिन का कौन करे गुणगान।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि मंदिरस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं चैत्यभूमि मंदिरस्थ जिन प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं चैत्यभूमि मंदिरस्थ जिन प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चौपाई)

प्रासुक कर हम जलभर लाए, प्रभु पद में त्रयधार कराए।
बने जिनालय अतिशयकारी, प्रतिमाएँ भवताप निवारी।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन केसर घिसकर लाए, चरण चर्चने को हम आए।
बने जिनालय अतिशयकारी, प्रतिमाएँ भवताप निवारी।।2।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय अक्षत धोकर लाए, अक्षय पद पाने हम आए।
बने जिनालय अतिशयकारी, प्रतिमाएँ भवताप निवारी।।3।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित पुष्प चढ़ाने लाए, काम वासना हरने आए।
बने जिनालय अतिशयकारी, प्रतिमाएँ भवताप निवारी।।4।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे यह नैवेद्य बनाए, क्षुधा नाश करने हम लाए।
बने जिनालय अतिशयकारी, प्रतिमाएँ भवताप निवारी।।5।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत के मणिमय दीप जलाए, मोह महातम हरने आए।
बने जिनालय अतिशयकारी, प्रतिमाएँ भवताप निवारी।।6।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप जलाने ताजी लाए, कर्म नाश करने हम आए।
बने जिनालय अतिशयकारी, प्रतिमाएँ भवताप निवारी।।7।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे फल यह श्रेष्ठ चढ़ाए, मोक्ष महाफल पाने आये।
बने जिनालय अतिशयकारी, प्रतिमाएँ भवताप निवारी।।8।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य से अर्घ्य बनाए, शाश्वत पद पाने को लाए।
बने जिनालय अतिशयकारी, प्रतिमाएँ भवताप निवारी।।9।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- क्षीर समान सुनीर, भरकर लाए श्रेष्ठ यह।
नाशें भव की पीर, धारा देते तीन हम।।

(शान्तये शांतिधारा)

ताजे विविध प्रकार, फूले-फूले फूल यह।
आगम के अनुसार, पुष्पाञ्जलि करते यहाँ।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- चैत्य भूमि के बिम्ब जिन, मंदिर हैं मनहार।
गाते हम जयमालिका, जिसकी अपरम्पार।।

समवशरण में तीर्थंकर जिन, के चरणों करते अर्चन।
चैत्यभूमि के जिन मन्दिर शुभ, जिन बिम्बों को है वन्दन।।
तीन लोक में पूज्य जिनेश्वर, पूजा करते सुर-नर आन।
महिमा सुनकर हम भी आए, करने को हे प्रभु ! गुणगान।।1।।

समवशरण की चतुर्दिशा में, चैत्यभूमि है गोलाकार।
बनी नाट्यशालाएँ चउदिश, चउ बीथी में अपरम्पार।।
एक रंग भूमि में अनुपम, भवन देवियाँ रहीं महान।
हाव-भाव दिखलाकर नाचें, करती हैं जिन का गुणगान।।2।।

करती नृत्य देवियाँ उनमें, बत्तिस-बत्तिस चारों ओर।
भव्य जीव आकर हो जाते, समवशरण में भाव विभोर।।
एक-एक जिनगृह के ऊपर, शिखर बने हैं श्रेष्ठ महान।
महिमा वर्णन करने वाले, बार-बार करते गुणगान।।3।।

देव महल भी बने मध्य में, वन उपवन से शोभ रहे।
बावड़ियों से युक्त रहे हैं, चारों ओर प्रासाद कहे।।
क्रीड़ा करते देव सभी मिल, चरणों में होकर नत भाल।
अष्ट द्रव्य से पूजा करके, प्रभु की गाते हैं जयमाल।।4।।

दो-दो धूप घटों से शोभित, अनुपम होते जिनके द्वार।
धूप सुगन्धित सुरगण खेते, महिमा जिसकी अपरम्पार।।
धन्य हुआ है जीवन मेरा, श्री जिनेन्द्र की मिली शरण।
सुख-शांति आनन्द प्राप्त हो, अन्तिम शिवपद करें वरण।।

(छन्द : घत्तानन्द)

जय-जय जिन स्वामी, त्रिभुवननामी, तीर्थंकर महिमाकारी।
है विशद नमामि, जिनगृहनामी, जिन प्रतिमाएँ सुखकारी।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- चैत्य भूमि अनुपम रही, समवशरण में खास।
अर्चा कर मुक्ति मिले, है हमको विश्वास।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

द्वितीय खातिका भूमि वर्णन

(दोहा)

भूमि खातिका में रही, दूजी गली महान।
स्वच्छ नीर जिसमें भरा, करते हम गुणगान।।1।।

ॐ ह्रीं मार्गे वामदक्षिणपार्श्वे अन्तर्गलिमध्ये द्वितीयखातिकाभूमि संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नजड़ित खाई परम, वलय व्यासयुत मान।
शोभा अपरम्पार है, जिनवर किए बखान।।2।।

ॐ ह्रीं द्वाविंशतिभागवलयव्यासयुक्त द्वितीयखातिकाभूमि रत्नसोपान संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परधि प्रथम दूजी भरी, शोभा रही अपार।
वेदी सुन्दर द्वार है, दिखती अपरम्पार।।3।।

ॐ ह्रीं प्रथम द्वितीय परिधौ अनेकलघुद्वार संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुम्बद बनी प्रमाण से, शोभित हैं लघु द्वार।
सुन्दर कलशे भी धरे, ध्वज है अपरम्पार।।4।।

ॐ ह्रीं लघुद्वारे सकलशक्षुद्रगुमठी संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लघु द्वार के अग्र में, पुल हैं अपरम्पार।
रत्नमयी शोभा रही, जग में मंगलकार।।5।।

ॐ ह्रीं लघुद्वाराग्रे रत्नखचितसेतुयुक्त-खातिका संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लघु द्वार से पुल बने, गंधकुटी की ओर।
अर्चा को प्राणी चलें, होकर भाव-विभोर।।6।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमेः अग्रे वेदिकालघुद्वारसेतुमार्गेभ्यः गन्धकुट्याः भूमिपर्यन्तसुगममार्ग संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजी वेदी द्वार से, जाते नर पशु देव।
अन्तर गलियों से सभी, आगे बढ़ें सदैव।।7।।

ॐ ह्रीं द्वितीयवेदिकाद्वारमध्यतः गन्धकुटीपर्यन्तसुगममार्ग संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुल के ऊपर बैठकर, करते हैं विश्राम।
ध्वजा कलशमय शोभती, भूमि खातिका नाम।।8।।

ॐ ह्रीं सेतोः उपरि उभयपार्श्वे कलशध्वजाबहुशिखरयुक्तबहु-विष्टर संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धरि छन्द)

परदे द्वारे पर हैं महान, चित्रों से शोभित भू-प्रधान।
खाई में झलके जो विशेष, दर्पण सम दिखते हैं जिनेश।।9।।

ॐ ह्रीं सेतोः उपरि अनेक विष्टर संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल खाई का निर्मल महान, शोभित है दर्पण के समान।
नावों का जिसमें गमन खास, लोगों को आता खूब रास।।10।।

ॐ ह्रीं अनेकलघुविशालनौका संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छतरीयुत बंगले हैं अपार, शुभ चित्र बने हैं कई प्रकार।
जो रत्नमयी शोभित विशेष, रचना कोई न रही शेष।।11।।

ॐ ह्रीं यबनिकाशोभाशोभितानेकनौका संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नौकाओं में सुर-नर विशाल, जिन भक्ति करें होके खुशाल।
बजते हैं बाजे कई प्रकार, जिनदर्शन की महिमा अपार।।12।।

ॐ ह्रीं जिनगुणगायकदेव विद्याधरयुक्तनोका संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गति नौकाओं की है विशेष, वह घूमे भू के हर प्रदेश।
सब प्राणी होते हैं विभोर, आनन्द होता है सभी ओर।।13।।

ॐ ह्रीं खातिकासु अतिशीघ्रगामिनौकासंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ समवशरण दीखे विशाल, प्रभु पद में प्राणी विनत भाल।
भक्ति के रंग में रंगे जीव, पूजा अर्चा करते अतीव।।14।।

ॐ ह्रीं अनेकातिशययुक्त पुण्यसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खातिका भूमि पूजा

(स्थापना)

समोशरण में भूमि खातिका, शोभा मंडित रही महान।
फूले कमल कुमद हैं जिसमें, स्वच्छ नीरयुत आभावान।।
मणिमय बनी सीढ़ियाँ जिसमें, हंसादि कलरव करते।
समोशरण पावन जिनेन्द्र के, सुर-नर के मन को हरते।।
आह्वानन करते जिनवर का, अपने हृदय सजाने को।
भाव सहित पूजा करते हम, प्रभु सौभाग्य जगाने को।।

ॐ ह्रीं खातिकाभूमियुत समवशरणस्थ जिनदेव जिन प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।

ॐ ह्रीं खातिकाभूमियुत समवशरणस्थ जिनदेव जिन प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं खातिकाभूमियुत समवशरणस्थ जिनदेव जिन प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(नरेन्द्र छन्द)

क्षीरोदधि का निर्मल जल हम, कलश भराकर लाए।
जन्म-जरा-मृत्यु रोगों के, नाश हेतु हम आए।।
समवशरण है भूमि खातिका, युक्त मनोहर भाई।
भवि जीवों के लिए कही जो, उभय लोक सुखदाई।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी खातिकाभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयगिरि का परम सुगन्धित, चन्दन घिसकर लाए।
भव आताप विनाश हेतु, हम जिन के चरण चढ़ाए।।
समवशरण है भूमि खातिका, युक्त मनोहर भाई।
भवि जीवों के लिए कही जो, उभय लोक सुखदाई।।2।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी खातिकाभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धवल मनोहर उज्ज्वल तंदुल, पूजा करने लाए।
अमल अखण्डित पद पाने को, पूजा आज रचाए।।
समवशरण है भूमि खातिका, युक्त मनोहर भाई।
भवि जीवों के लिए कही जो, उभय लोक सुखदाई।।3।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी खातिकाभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

उपवन भूमि से यह सुरभित, पुष्पित पुष्प मँगाए।
कामबाण विध्वंश होय हम, निज गुण पाने आए।।
समवशरण है भूमि खातिका, युक्त मनोहर भाई।
भवि जीवों के लिए कही जो, उभय लोक सुखदाई।।4।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी खातिकाभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत मेवा के चरु सरस यह, यहाँ चढ़ाने लाए।
क्षुधा रोग हो नाश हमारा, यही भावना भाए।।

समवशरण है भूमि खातिका, युक्त मनोहर भाई।
भवि जीवों के लिए कही जो, उभय लोक सुखदाई।।5।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी खातिकाभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम आरती करने हेतु, दीप जलाकर लाए।
मोह-तिमिर हो नाश हमारा, ज्ञान जगाने आए।।
समवशरण है भूमि खातिका, युक्त मनोहर भाई।
भवि जीवों के लिए कही जो, उभय लोक सुखदाई।।6।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी खातिकाभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

परम सुगन्धित चन्दनादि से, मिश्रित धूप बनाए।
अष्ट कर्म के नाश हेतु हम, यहाँ जलाने लाए।।
समवशरण है भूमि खातिका, युक्त मनोहर भाई।
भवि जीवों के लिए कही जो, उभय लोक सुखदाई।।7।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी खातिकाभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सेव आम अंगूर आदि शुभ, फल के थाल भराए।
मोक्ष महाफल पाने हेतु, यहाँ चढ़ाने आए।।
समवशरण है भूमि खातिका, युक्त मनोहर भाई।
भवि जीवों के लिए कही जो, उभय लोक सुखदाई।।8।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी खातिकाभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन अक्षत कुसुमांजलि, चरुवर दीप जलाएँ।
धूप और फल श्रेष्ठ मिलाकर, अनुपम अर्घ्य चढ़ाएँ।।
समवशरण है भूमि खातिका, युक्त मनोहर भाई।
भवि जीवों के लिए कही जो, उभय लोक सुखदाई।।9।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी खातिकाभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- लेकर के शुभ नीर, भूमि खातिका से शुभम्।
देकर धारा तीन, शांति धारा कर रहे।।

(शान्तये शांतिधारा)

समवशरण में श्रेष्ठ, भूमि खातिका बनी है।
पाएँ सुपद यथेष्ठ, पुष्पाञ्जलि अर्पित करें।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- समवशरण तिय लोक में, होता पूज्य त्रिकाल।
भूमि खातिका की यहाँ, गाते हैं जयमाल।।

(छन्द : मोतियादाम)

जिनेश्वर होते पूज्य त्रिकाल, नमूँ मैं भी चरणों नतभाल।
चरण में वन्दन करें शतेन्द्र, करें पूजा कई इन्द्र-नरेन्द्र।।
नहीं जिनवर के गुण का पार, कही है महिमा अपरम्पार।
चरण में आते कई मुनीश, झुकाते चरणों में जो शीश।।
स्वयं गणधर देते हैं ढोक, मिटाते अपने मन का शोक।
इन्द्र भी करता नहीं है देर, साथ आता है इन्द्र कुबेर।।
करें रत्नों की वृष्टि अपार, बनाते समवशरण सुखकार।
प्रभु देते हैं हित उपदेश, सभी पाते हैं ज्ञान विशेष।।
जिनेश्वर पाते दर्शन ज्ञान, प्राप्त करते सुख वीर्य महान।
करें प्राणी प्रभु का गुणगान, जो करते हैं पद में श्रद्धान।।
नहीं है जैनागम का अंत, कहते तीर्थंकर भगवन्त।
बनाके सागर जल की स्याह, लेखनी हो सारा बनराय।।

मही सारी कागज हो जाय, तथापि आगम लिखा न जाय।
बनाते समवशरण शुभ देव, रत्न हेमार्जुन का जो एव।
उसी में भूमि खातिका श्रेष्ठ, सुशोभित होती जहाँ यथेष्ठ।।
जिनालय उसमें जो जिनबिम्ब, झलकता उसमें निज का बिम्ब।
नमन करते हैं जगे के ईश, झुकाते हम भी पद में शीश।।
नहीं हो आवागमन जिनेश, मिले सिद्धि पद हमें विशेष।
शरण लेकर आए हम आश, बनालो हमको पद का दास।।

दोहा- समवशरण में खातिका, भूमि चारों ओर।
भव्यों को करती 'विशद', अतिशय भाव विभोर।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी खातिकाभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(जोगीरासा छंद)

चतुर्दिशा में शोभित होती, भूमि खातिका प्यारी।
पुष्पाञ्जलि करते हैं अर्पित, भाव सहित मनहारी।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलि क्षिपेत् ।।

तृतीय पुष्पवाटिका (लता) भूमि वर्णन

पुष्पवाटिका में पुष्पों की, गंध महकती अपरम्पार।
अन्तर गली दूसरी वेदी, द्वार शोभते हैं मनहार।।
लता भूमि तृतिय कहलाई, समवशरण में मंगलकार।
तीर्थंकर के पद में वन्दन, करते प्राणी बारम्बार।।1।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमिद्वारे बामदक्षिणान्तरगलीषु चतुर्थभागप्रमाण द्वितीयवेदिका संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय कोट शोभता अनुपम, जिनदर्शन हों चारों ओर।
आगे पुष्पवाटिका जानो, शोभा करती भाव-विभोर।।

लता भूमि तृतीय कहलाई, समवशरण में मंगलकार।
तीर्थंकर के पद में वन्दन, करते प्राणी बारम्बार।।2।।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि चतुर्थभागद्वितीयसाल (कोट) संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वलय व्यास तृतीय भूमि का, समवशरण के हैं अनुसार।
कलश युक्त हैं चारों दिश में, अन्तरगली में अनुपमहार।।
लता भूमि तृतीय कहलाई, समवशरण में मंगलकार।
तीर्थंकर के पद में वन्दन, करते, प्राणी बारम्बार।।3।।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि चत्वारिंशद्भाग वलयव्यास पुष्पवाटिकासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भाग चवालिस में फुलवारी, पुष्प वृक्ष हैं विविध प्रकार।
तीर्थंकर के पद में वन्दन, करते प्राणी बारम्बार।।
लता भूमि तृतीय कहलाई, समवशरण में मंगलकार।
तीर्थंकर के पद में वन्दन, करते प्राणी बारम्बार।।4।।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि चत्वारिंशद्भागपुष्पवाटिका संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

भूमि तीसरी में बनी, फुलवारी मनहार।
अन्तर गली में द्वार शुभ, खम्भ हैं अपरम्पार।।5।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अन्तर्गल्याः द्वाराग्रे रम्यभूमि संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रौंस के चारों ओर शुभ, सोहें ऊँचे द्वार।
तिन पर गोखें श्रेष्ठ हैं, कलशा ध्वज मनहार।।6।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ पुष्पवाटिका चतुर्दिक्षु अनेकरचनायुक्त चतुर्द्वारसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रौंस के बीचोंबीच है, सीढ़ी मय चौपाल।
ऊपर बारह दरी शुभ, गोखें रहीं विशाल।।7।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अन्तर्गल्याः द्वाराग्रे समीपद्वादशद्वारीयुक्त चतुःचतुष्क संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चार कोंण में चार हैं, खम्बे श्रेष्ठ प्रधान।
बंगला और प्रकोष्ठ शुभ, कलशा चढ़े महान।।8।।

ॐ ह्रीं अनेकप्रकोष्ठयुक्त तृतीयभूमि संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनागार मण्डप तरू, रौंस है जहाँ प्रधान।
अलिगण मानो जिन प्रभु, का करते गुणगान।।9।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमिपुष्पवाटिकामण्डप संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

रौंस बनी चौतरफा न्यारी, मानों हो रत्नों की क्यारी।
बीच में है सुर वृक्ष निराले, फूल बने हैं सुन्दर आले।।10।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमि रत्नखचितसीमाचतुरालदालानसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला कहीं गुलाब के भाई, फूल खिले अतिशय सुखदाई।
गुल मेंहदी की शोभा न्यारी, पुष्प चमेली के मनहारी।।11।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमि कुन्दाद्यनेकपुष्पयुक्त पुष्पवाटिकासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गेंदा कहीं केतकी जानो, खिले द्वार पर पुष्प बखानो।
फूले हैं मचकुन्द निराले, केवड़ा महकें खुशबू वाले॥12॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अनेकपुष्पयुक्त पुष्पवाटिकासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प कुन्द तुर्रा के भाई, मरुआ भी सोहें अधिकाई।
सेवन्ती अरु जुही निराले, फुलवारी में सोहे आले॥13॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अनेकपुष्पयुक्त पुष्पवाटिका संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम फूल खिले मनहारी, परम सुगन्धित आनन्दकारी।
दशों दिशाएँ मंगलकारी, प्राणी करते क्रीड़ा भारी॥14॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ देवादिक्रीड़ायुक्तपुष्पवाटिका संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शम्भू छन्द)

रौंस के दोनों तट पर भाई, केले के तरु रहे महान।
श्रेणीबद्ध रहे बंगलों तक, दिखते हैं जो आभावान॥15॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ सीमातट श्रेणीबद्धकदलीवृक्षसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रौंस के दोनों ओर खड़े हैं, नारंगी शुभ आम अनार।
वृक्षों की शोभा है अनुपम, दिखते हैं जो विस्मयकार॥16॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौसीमायाः वामदक्षिणभागयोः अनेकवृक्ष फलपुष्पसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नीबू नारियल इमली जामुन, अरु बादाम हैं खुशबूदार।
वृक्षों की शोभा है अनुपम, दिखते हैं जो विस्मयकार॥17॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ सीमापार्श्वद्वयनिम्बुकनारिकेलप्रमुखवृक्ष संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीताफल बादाम जामफल, तरुवर जहाँ अनेक प्रकार।
बीच में बंगला शोभित होता, दिखता है जो विस्मयकार॥18॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अनेकरचना संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विदिशा में शुभ रौंस वापिका, ताल शोभते चारों ओर।
बैठक सार कलशध्वज संयुत, करते मन को भाव-विभोर॥19॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ सीमाचतुर्विदिशासु वापिकासरोवरसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल नीर क्षीर सम सुन्दर, श्रेष्ठ वापिका रही विशाल।
रत्नों की झाल से शोभित, प्राणी होते जहाँ निहाल॥
लता भूमि तृतीय कहलाई, समवशरण में मंगलकार।
तीर्थंकर के पद में वन्दन, करते प्राणी बारम्बार॥20॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ वापीसरःसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

वृक्षों की शाखाएँ भाई, नीचे शिला रही स्थाई।
मणिमय सुन्दर रही महान, जिस पर मुनि विराजे आन॥21॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ वापिकाप्रमुखस्थलविराजितसंयमी संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

योग धारते हैं अनगार, ज्ञान ध्यान तप के आधार।
निज का करते हैं जो ध्यान, निश्चय पाएँगे निर्वाण॥22॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ धर्मवृष्टिकारकदिगम्बरमुनिसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बने प्रकोष्ठ जिसमें मनहार, महिमा जिसकी विस्मयकार।
चतुर्दिशा में झालर चार, शोभित होती मंगलकार॥23॥

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ मनोहरप्रकोष्ठसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपदेशक बैठे तह आन, पाये हैं जो अतिशय ज्ञान।
है प्रकोष्ठ अति महिमावान, करते प्राणी हैं कल्याण।।24।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ धर्मोपदेशकयतियुक्तप्रकोष्ठसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रशिला है वहाँ महान, जहाँ बैठ मुनि करते ध्यान।
करते कर्मों का संहार, स्व-पर का करते उपकार।।25।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ चन्द्रकान्तशिलोपरिध्यानस्थयति संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बंगले अभ्यन्तर में जान, देवों का है वास महान।
नृत्य करें प्रभु का गुणगान, पूजा करते मंगलगान।।26।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ देवीदेवनृत्ययुक्त प्रकोष्ठसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रौंस क्षेत्र में घूमें देव, प्रभु की अर्चा करें सदैव।
पुण्यार्जन जो करें विशेष, नाश हेतु जो कर्म अशेष।।27।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ देवक्रीड़ायुक्तसीमासंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुभग वेल के मण्डप जान, श्रेणिबद्ध जो खड़े महान।
इक रचना का किया बखान, तीनों में ऐसा ही मान।।
विदिश की रचना भी प्यारी, अतिशय खिली हुई फुलवारी।
जिन गणधर सोहें अविकार, पूज रहे हम मंगलकार।।28।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अनेकरचनासंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय लता भूमि पूजा

(स्थापना)

निज आत्म सुधा रस पीने का, शुभ भाव हृदय में आया है।
अब कर्म कालिमा धोने का, मैंने भी लक्ष्य बनाया है।।
है समवशरण में लता भूमि, लोगों को प्रमुदित करती है।
जो अतिशय शोभा से अपनी, भवि जीवों का मन हरती है।।
जिनबिम्ब विराजित हैं मनहर, कर सके कौन उनका वर्णन।
हम हृदय कमल के आसन पर, करते हैं उनका आह्वानन।।

ॐ ह्रीं लताभूमियुत समवशरणस्थ जिनदेव जिन प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं लताभूमियुत समवशरणस्थ जिनदेव जिन प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं लताभूमियुत समवशरणस्थ जिनदेव जिन प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(छंद-ताटंक)

श्री जिनेन्द्र की वाणी पावन, श्रवण नहीं कर पाई है।
चतुर्गति के दुख मैटन की, मन में आज समाई है।।
निर्मल जल प्रासुक करके हम, आज चढ़ाने लाए हैं।
जन्म-जरादि दुख मैटन के, मन में भाव जगाए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी लताभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन से शीतलता हमको, जरा नहीं मिल पाई है।
भव संताप मिटाने की सुधि, मन में आज समाई है।।
भक्ति भाव से चंदन लेकर, आज चढ़ाने आए हैं।
भवाताप नशाने के शुभ, मन में भाव जगाए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी लताभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ अखण्ड अनुपम अक्षय पद, प्राप्त नहीं कर पाए हैं।
प्राप्त किए पद तीन लोक के, पर पद में अटकाएँ हैं।।
शालिधान्य के अक्षय अक्षत, आज चढ़ाने आए हैं।
परम अखण्डित अक्षय पद के, मन में भाव जगाए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी लताभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

भव के फेरे में पड़ करके, फेरे बहुत लगाए हैं।
काम वासना के द्वारा हम, भव-भव में भटकाए हैं।।
फूले-फूले फूल मनोहर, आज चढ़ाने आए हैं।
कामबाण के नाश हेतु शुभ, मन में भाव जगाए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी लताभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा नाश करने को हमने, षट्रस व्यंजन खाए हैं।
व्यंजन खाकर के रसना को, शांत नहीं कर पाए हैं।।
ले नैवेद्य थाल में भरकर, आज चढ़ाने लाए हैं।
क्षुधा वेदना नाश होय यह, मन में भाव जगाए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी लताभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह तिमिर के कारण सारे, जग में हम भटकाए हैं।
सम्यक् ज्ञानदीप की ज्योति, नहीं जलाने पाए हैं।।
दिव्य देशना के दीपों को, आज जलाने आए हैं।
मोह अंध का दुख मैटन के, मन में भाव जगाए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी लताभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टकर्म आठों अंगों में, अपना बंधन डाले हैं।
भूल स्वयं की शक्ति चेतना, कीन्हें कर्म हवाले हैं।।
अष्ट गंध मय धूप मनोहर, आज जलाने लाए हैं।
अष्ट कर्म का दहन करूँ मैं, मन में भाव जगाये हैं।।7।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी लताभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक में जितने फल हैं, सारे हमने खाए हैं।
सफल हुआ न जीवन मेरा, खा-खाकर पछताए हैं।।
मोक्ष महाफल पाने को फल, आज चढ़ाने लाए हैं।
महामोक्ष फल पाने के शुभ, मन में भाव जगाए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी लताभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्र कुबेर चक्रवर्ति सम, पद हमने सब पाए हैं।
नश्वर पद की लालच में कई, धोखे हमने खाए हैं।।
पद अनर्घ को पाने हेतु, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
हो अनर्घ पद प्राप्त हमें यह, मन में भाव जगाए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी लताभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- तीर्थंकर जिनराज का, समवशरण शुभकार।
लताभूमि शोभित प्रभो ! वन्दूँ बारम्बार।।
श्रेष्ठ लताओं का जहाँ, फैल रहा है जाल।
लता भूमि की हम यहाँ, गाते हैं जयमाल।।

(चौपाई)

जय-जय जिनवर जन हितकारी, दया धुरन्धर समताधारी।
जय-जय-जय लक्ष्मी के धारी, लताभूमि की शोभा भारी।।1।।
जय-जय जिनवर शिवसुखकारी, गुण अनन्त के तुम हो धारी।
सुर-नर-मुनिगण वंदन गावैं, पूजा कर मन में हर्षावैं।।2।।

लताभूमि की शोभा न्यारी, चहुँ दिश खिली-सुमन की क्यारी।
श्रेष्ठ वापिका शुभ दिखलाये, विविध वर्णयुत पुष्प बताये ।।3 ।।
जहँ मणिमय सीढ़ी मनहारी, शोभित होती है मनहारी।
सुर-नर चहुँदिश जय-जय गावें, जिन दर्शकर पुण्य बढ़ावें ।।4 ।।
शुभ त्रिकोण वर्तुल वापिकाएँ, अरु पुन्नाग नाग सुलताएँ।
कुब्जक हैं शत पत्र निराले, अति मुक्तवन शाखा वाले ।।5 ।।
खिले कमल सबका मन मोहें, समवशरण की रचना सोहे।
सुर दृम-दृम मृदंग बजावें, समवशरण में नाचे-गावें ।।6 ।।
जिन धुनि मन संताप हरावैं, सप्तभंग को प्रभु समझावैं।
श्री जिनवर के गुण जो गावैं, सुख संपद सब ही सुख पावैं ।।7 ।।
हमने भी यह भाव बनाए, समवशरण रचना करवाए।
स्थापित जिनबिम्ब कराए, सब मिल जिन को पूज रचाएँ ।।8 ।।
समवशरण की रचना प्यारी, जग में होती आनन्दकारी।
पुण्य उदय मेरा अब आया, जो जिन प्रभु का दर्शन पाया ।।10 ।।

(छन्द : घत्ता)

श्री जिन हितकारी, शिवपथकारी, भक्ति तिहारी दुःखहारी।
त्रिभुवन में न्यारी, महिमा भारी, पूजन थारी सुखकारी ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्लताभूमिमण्डित जिनेन्द्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- समवशरण में शोभती, लता भूमि मनहार।
जिन चरणों को पूजते, मन से बारम्बार ।।

।। शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

चतुर्थ उपवन भूमि वर्णन

(चौपाई)

चौथी भूमि गली सुभाई, वाम दिशा में है सुखदाई।
दक्षिण में अन्तर गलि जानो, ॐद्वार जिसमें शुभ मानो ।।1 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थवीथिकायां वामदक्षिणान्तरवीथिकाद्वारसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुभग नाट्यशालाएँ जानो, बत्तिस श्रेष्ठ देवियाँ मानो।
सुभग अखाड़े सोहें भाई, महिमा जिन की है सुखदाई ।।2 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ सुभगनाट्यशाला संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर बालाएँ प्रभु गुण गावें, हाव-भाव से रास रचावें।
अतिशय नृत्य करें मनहारी, गुण गाती हैं मंगलकारी ।।3 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वारेनाट्यशालासंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आगे कोट दूसरा जानो, जो चौथाई भाग प्रमाणो।
तीजी वेदी है सुखकारी, चार भाग जिसके मनहारी ।।4 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ तुर्य (चार) भागप्रमाणद्वितीयदुर्गतृतीयवेदिका-संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विदिशाओं की शोभा भाई, वलय व्यास जिसके सुखदायी।
भाग चवालिस जिसमें गाए, ज्ञान के मोती प्रभु लुटाए ।।5 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वितीयदुर्गतृतीयवेदिकाचत्वारिंशद्भागोपवन संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि कोण रहा मनहारी, तरु अशोक जिसमें सुखकारी।
सप्त पर्ण नैऋत्य में भाई, तरुवर श्रेष्ठ रहा सुखदाई ।।6 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ आग्नेयदिशि अशोकवनेन नैऋत्यदिशि सप्तपर्णवनेन संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पक तरु वायव्य में जानो, अतिशय शोभा जिसकी मानो।
आम्र तरु ईशान में भाई, शोभित होते हैं सुखदाई।।7।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ वायव्यदिशायां चम्पकवनेन ईशानदिशायाम् आम्रवनेन संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भाँति-भाँति के तरुवर जानो, भूप वृक्ष जिनको पहिचानो।
तरु अशोक चंपक मनहारी, आम्र वृक्ष रहे सुखकारी।।8।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अशोकचम्पकसप्तपर्णरसालवनमध्यस्थभूपवृक्ष संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वन की शोभा है मनहारी, मंदिर वापी मंगलकारी।
पर्वत ताल सुभग शुभ जानो, क्रीड़ा देव करें शुभ मानो।।9।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अनेकरचनायुक्तचतुर्वनसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भू वृक्षों की शोभा न्यारी, पंक्ति दिखती प्यारी-प्यारी।
वन अशोक मध्य में भाई, बारहदरी बनी सुखदाई।।10।।

ॐ ह्रीं अशोकवने द्वादशद्वारीसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ बनी है बारह द्वारी, शोभा जिसकी दिखती न्यारी।
महिमा जिसकी गाते प्राणी, वहाँ बैठ सुनते जिनवाणी।।11।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अनेकरचनायुक्त द्वादशद्वारी संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शम्भू छन्द)

बने बैठकों के गवाक्ष में, परदे पड़े हैं शुभ मनहार।
रत्नमाल लटकी हैं अनुपम, प्राणी करते जय जयकार।।12।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वादशद्वार्याःउपरिअनेकरचनायुक्त त्रितलगवाक्षसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर-नर विद्याधर आकर के, पूजा करते अपरम्पार।
गंधकुटी में तिष्ठे जिन की, अर्चा करते बारम्बार।।13।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अशोकवने द्वादशद्वार्याः उपरि देवाद्यधिष्ठित गवाक्षसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बारहदरी बनी अभ्यंतर, है त्रिकोट बीच में चौक।
नृत्यगान करते हैं प्राणी, जिनको है भक्ति का शौक।।14।।

ॐ ह्रीं द्वादशद्वार्याः आभ्यन्तरे दुर्गत्रयमध्येपीठत्रयसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन पीठिकाओं के ऊपर, वृक्ष अशोक रहा मनहार।
जीवों का है शोक निवारक, शोभित होता अपरम्पार।।15।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ जिनदेहप्रमाणतः द्वादशगुणोतुङ्गाशोकवृक्षयुक्तपीठत्रय संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

जड़ हीरे से बनी है, शाखा बनी है स्वर्ण।
हरता शोक अशोक तरु, अनुपम है शमोशर्ण।।16।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ विविधाशोकवृक्षसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फूलों की महिमा अगम, अतिशय शोभावान।
पत्र बने पन्ना रतन, फल रमणीय महान।।17।।

ॐ ह्रीं विविधशोभायुक्ताशोकवृक्षसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ईशानादि विदिशाओं में, वन शोभित होते हैं चार।
चतुःशोक पवन के झोंके, से आती है श्रेष्ठ बयार।।
शोभा जिसकी कही न जाए, समवशरण सोहें आप्त।
तीर्थंकर के दर्शन करके, मोक्ष लक्ष्मी होवे प्राप्त।।18।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ चतुर्वनेषु चतुर्भूपवृक्षशोभासंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अशोक वृक्ष पूजा

(स्थापना)

समवशरण में उपवन भूमि, शोभित होती अपरम्पार।
आग्नेय में तरु अशोक है, शोक निवारी मंगलकार।।
तरुवर की शाखाओं पर भी, शोभित हैं जिनबिम्ब महान।
जिनवर जिनबिम्बों का करते, हृदय कमल में हम आह्वान।।
समवशरण में जग जीवों को, है समानता का अधिकार।
हम भी समवशरण में जाकर, करें अर्चना बारम्बार।।

ॐ ह्रीं अशोकवृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं अशोकवृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं अशोकवृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चौपाई)

प्रासुक निर्मल नीर चढ़ाएँ, जन्म-मृत्यु का रोग नशाएँ।
उपवन भूमि मंगलकारी, तरु अशोक सोहे मनहारी।।1।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि अशोकवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चंदन यहाँ चढ़ाएँ, भव आतप का रोग नशाएँ।
उपवन भूमि मंगलकारी, तरु अशोक सोहे मनहारी।।2।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि अशोकवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत श्रेष्ठ चढ़ाने लाए, पद अक्षय पाने हम आए।
उपवन भूमि मंगलकारी, तरु अशोक सोहे मनहारी।।3।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि अशोकवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प चढ़ाने को हम लाए, कामबाण मेरा नश जाए।
उपवन भूमि मंगलकारी, तरु अशोक सोहे मनहारी।।4।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि अशोकवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हम नैवेद्य चढ़ाने लाए, क्षुधा नाश मेरी हो जाए।
उपवन भूमि मंगलकारी, तरु अशोक सोहे मनहारी।।5।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि अशोकवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप जलाया मंगलकारी, मोह-तिमिर का नाशनकारी।
उपवन भूमि मंगलकारी, तरु अशोक सोहे मनहारी।।6।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि अशोकवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप अग्नि में यहाँ जलाएँ, अपने आठों कर्म नशाएँ।
उपवन भूमि मंगलकारी, तरु अशोक सोहे मनहारी।।7।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि अशोकवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे श्रेष्ठ सरस फल लाए, मोक्ष महाफल पाने आए।
उपवन भूमि मंगलकारी, तरु अशोक सोहे मनहारी।।8।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि अशोकवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य बनाकर के हम लाए, पद अनर्घ्य हमको मिल जाए।
उपवन भूमि मंगलकारी, तरु अशोक सोहे मनहारी।।9।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि अशोकवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तपर्ण वृक्ष पूजा

(स्थापना)

सप्तपर्ण तरु शोभित होता, है नैऋत्य दिशा की ओर।
रत्नमयी सुन्दर आभा से, करता सबको भाव-विभोर।।
शोभित हैं जिनबिम्ब मनोहर, शाखाओं पर मंगलकार।
आह्वानन जिनबिम्ब जिनेश्वर, का करते हम बारम्बार।।
समवशरण में जग जीवों को, है समानता का अधिकार।
हम भी समवशरण में जाकर, करें अर्चना बारम्बार।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(सोरठा)

क्षीरोदधि का नीर, उज्ज्वल भरकर लाए हैं।
जन्मादि की पीर, हराने को हम आए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन ले गोशीर, घिसकर लाए चरण में।
भवाताप की पीर, हरने को हम आए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत धवल अपार, यहाँ चढ़ाने लाए हैं।
अक्षय पद मनहार, हम भी पाने आए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

है सुगन्ध का वास, पुष्प चढ़ाने लाए हैं।
कामरोग का नाश, करने को हम आए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ले नैवेद्य महान, अर्पित करते भाव से।
क्षुधा रोग की हान, करने आए हम यहाँ।।5।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करके दीप प्रजाल, भक्ति करने के लिए।
मिटे मोह की चाल, निर्मोही हम भी बने।।6।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

लेकर धूप महान, यहाँ जलाने आए हैं।
अष्ट कर्म की हान, होवे मेरी शीघ्र ही।।7।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे फल मनहार, भर कर लाए थाल में।
मोक्ष महाफल सार, मिले भक्ति करके हमें।।8।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों द्रव्य संवार, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
शिवपद का अधिकार, पद अनर्घ्य पाकर मिले।।9।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि सप्तपर्ण वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पक वन पूजा

(स्थापना)

उपवन भूमि में चम्पक वन, दिश वायव्य में शोभ रहे।
मंद मधुर मकरन्द सहित शुभ, भीनी-भीनी पवन बहे।।
जिनबिम्बों से शोभित उपवन, भूमि अनुपम रही महान।
अर्चा करने जिनबिम्बों की, उर में करते हम आह्वान।।

दोहा- चम्पक वन वायव्य में, दें छाया मनहार।
हर्षित होते जीव सब, पा आनन्द अपार।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(दोहा)

यह नीर कलश भर लाए, त्रय रोग नशाने आए।
हम शरण आपकी आए, भव भ्रमण नाश हो जाए।।1।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ गंध लिया मनहारी, भवताप विनाशनकारी।
हम शरण आपकी आए, भव भ्रमण नाश हो जाए।।2।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह धवल सुअक्षत लाए, अक्षय निधि पाने आए।
हम शरण आपकी आए, भव भ्रमण नाश हो जाए।।3।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

यह सुमन मनोहर लाए, निज काम नशाने आए।
हम शरण आपकी आए, भव भ्रमण नाश हो जाए।।4।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य लिया मनहारी, है क्षुधा विनाशनकारी।
हम शरण आपकी आए, भव भ्रमण नाश हो जाए।।5।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह मणिमय दीप जलाएँ, हम मोह नशाने आएँ।
हम शरण आपकी आए, भव भ्रमण नाश हो जाए।।6।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ धूप सुगन्ध जलाएँ, कर्मों का वंश नशाएँ।
हम शरण आपकी आए, भव भ्रमण नाश हो जाए।।7।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल लाए हम मनहारी, हम बने मोक्षपद धारी।
हम शरण आपकी आए, भव भ्रमण नाश हो जाए।।8।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु द्रव्य मिलाकर लाये, पाने अनर्घ पद आये।
हम शरण आपकी आए, भव भ्रमण नाश हो जाए।।9।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन-वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्रवनस्थ जिनपूजा प्रारम्भ

(स्थापना)

ज्ञानामृत पाने, कर्म नशाने, त्रिभुवनपति को ध्याते हैं।
जिनके गुण गाने, ध्यान लगाने, अपने हृदय सजाते हैं।।
आमों के वन में, भू उपवन में, प्राणी चरण प्रणाम करें।
हम न्हवन कराके, पूजा गाके, अपने सारे कष्ट हरें।।

दोहा- शोभित है वन आम का, दिशा रही ईशान।
भव्य जीव अर्चा करें, जिन चरणों में आन।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि आम्रवन-वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं ईशान दिशि आम्रवन-वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं ईशान दिशि आम्रवन-वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शम्भू छन्द)

हमने अनादि से कर्मों के, बन्धन करके बहु दुःख सहे।
हम राग-द्वेष की परिणति से, तीनों लोकों में भटक रहे।।
अब जन्म-जरा के नाश हेतु, यह निर्मल नीर चढ़ाते हैं।
आम्र वृक्ष के जिनबिम्बों को, सादर शीश झुकाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्रवनवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भोगों की रही कामना, जिससे जग में भ्रमण किया।
भव संताप मिटाने को न, हमने अब तक यतन किया।।
नाश होय संसार ताप मम्, चन्दन श्रेष्ठ चढ़ाते हैं।
आम्र वृक्ष के जिनबिम्बों को, सादर शीश झुकाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्रवनवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

विषय कषायों में रत रहकर, निज पद को न पाया है।
क्षण भंगुर जीवन पाकर के, तीनों लोक भ्रमाया है।।
अक्षय पद पाने को अभिनव, अक्षत चरण चढ़ाते हैं।
आम्र वृक्ष के जिनबिम्बों को, सादर शीश झुकाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्रवनवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मोह महामद को पीकर के, जीवन व्यर्थ गवाएँ हैं।
कामबाण से विद्ध हुए हम, अब तक चेत न पाए हैं।।
कामवासना नाश हेतु यह, पुष्पित पुष्प चढ़ाते हैं।
आम्र वृक्ष के जिनबिम्बों को, सादर शीश झुकाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्रवनवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हम विषय भोग की ज्वाला में, सदियों से जलते आए हैं।
आशाएँ पूर्ण न हो पाईं, हमने कई जन्म गवाएँ हैं।।

अब क्षुधा रोग के नाश हेतु, अतिशय नैवेद्य चढ़ाते हैं।
आम्र वृक्ष के जिनबिम्बों को, सादर शीश झुकाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्रवनवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है घोर तिमिर मिथ्या जग में, जिसमें जग जीव भ्रमाए हैं।
अतिशय प्रकाश का पुञ्ज जीव, हम अब तक समझ न पाए हैं।।
अब मोह-तिमिर के नाश हेतु, यह मनहर दीप जलाते हैं।
आम्र वृक्ष के जिनबिम्बों को, सादर शीश झुकाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्रवनवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानावरणादि कर्मों ने, इस जग में जाल बिछाया है।
हम फँसे अनादि से उसमें, छुटकारा न मिल पाया है।।
अब अष्ट कर्म के नाश हेतु, अग्नि में धूप जलाते हैं।
आम्र वृक्ष के जिनबिम्बों को, सादर शीश झुकाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्रवनवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम पुण्य पाप का फल पाकर, उसमें ही रमते आए हैं।
हम भटक रहे हैं निज पद से, न अक्षय फल को पाए हैं।।
अब मोक्ष महाफल पाने को, चरणों फल सरस चढ़ाते हैं।
आम्र वृक्ष के जिनबिम्बों को, सादर शीश झुकाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्रवनवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शास्वत है जीव अनादि से, हम अब तक जान न पाए हैं।
तन में चेतन का भाव जगा, उसको अपनाते आए हैं।।
अब पद अनर्घ पाने हेतु, अतिशय यह अर्घ्य चढ़ाते हैं।
आम्र वृक्ष के जिनबिम्बों को, सादर शीश झुकाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्रवनवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- जिनबिम्बों से युक्त हैं, कल्प वृक्ष मनहार।
गाते हैं जयमालिका, पाने शिव का द्वार।।

(चौपाई)

है चैत्य वृक्ष मणिमय महान, सुर-नर से पूजित है प्रधान।
गणधर मुनिवर से पूज्यमान, सब करें भाव से गुणोगान।।
है चैत्य वृक्ष चउदिश अपार, जिसकी शोभा का नहीं पार।
जय पूर्व दिशा तरुवर अशोक, जो भविजन के सब हरें शोक।।
है सप्तच्छद भूमि महान, चम्पक प्रतीचि में श्रेष्ठ मान।
फल सुमन युक्त भूमि प्रधान, उत्तर में आम्र के सुवन जान।।
है स्वर्ण कोट दूजा महान, चउ गोपुर द्वारों युक्त मान।
व्यन्तर सुर-मुद्गर आदि धार, उपवन भू-रक्षक रहे द्वार।।
मणिमय तोरण से युक्त जान, वसु मंगल द्रव्य से युक्त मान।
प्रति द्रव्य एक सौ आठ जान, सब हैं मंगलकारी महान।।
उपवन भू के आगे महान, चहुँ दिश में वन सुन्दर प्रधान।
है प्रथम सुवन जिसमें अशोक, जो हरे जगत का सर्व शोक।।
फिर सप्तच्छद तरुवर विशेष, आगे है चंपक तरु प्रदेश।
फिर आम्र सुवन शोभे महान, चउदिश तरु इक-इक है प्रधान।।
वसु प्रातिहार्य युत बिम्ब होय, जो कालुष मन का पूर्ण खोय।
जिन प्रतिमा के सम्मुख महान, शुभ मानस्तम्भ हो शोभमान।।
जो तीन कोटयुत है विशेष, जो पीठ त्रय के हैं प्रदेश।
शुभ बिम्ब चतुर्दिश में महान, है कठिन बड़ा करना बखान।।

क्रीड़ा पर्वत भी वहाँ मान, शुभ बनी वापिकाएँ महान।
जहँ उच्च भाव शोभें अपार, शुभ नाट्य गृहों का नहीं पार।।
जो जिनबिम्बों का करें ध्यान, वह सुख-शांति के हों निधान।
मेरे मन भी अब जगी चाह, मिल जाए मोक्ष की शुभम् राह।।

(घत्तानन्द छन्द)

जय-जय जिन श्रीधर, त्रिभुवन हितकर, मुक्तिरमाकर, सुखदाई।
हम जिन गुण गाएँ, दर्शन पाएँ, विघ्न नशाएँ, शिवदाई।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि अशोकवृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- सिद्ध बिम्ब तरु चैत्य के, होते अतिशयवान।
जिनकी पूजा हम करें, पाने निज कल्याण।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

पञ्चम ध्वज भूमि वर्णन

(दोहा)

पञ्चम भू में गली, दायीं बाईं जान।
अन्दर तृतीय वेदिका, चार भाग प्रमाण।।1।।

ॐ ह्रीं पंचमगल्यां वामदक्षिणभागयोः आभ्यन्तरगल्यां चतुर्थ भागप्रमाणान्तरवेदिका संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोट तीसरा भाग चउ, स्वर्ण वर्ण में जान।
पञ्चम भूमि ध्वज कई, जिसमें रहे महान।।2।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुर्थभागस्वर्णमयमहासुन्दरतृतीयसालसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भाग चवालिस भूमि अरु, वलय व्यास पहिचान।
वेदी कोट विशाल है, बने हैं चित्र महान।।3।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुःचत्वारिंशद भागवलयव्यासवेदिकाचित्र समूह संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के पूर्व भव, के हैं चित्र अनेक।
चित्रों से शिक्षा मिले, जागे हृदय विवेक।।4।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौसमवशरणे शालवेदिकायां तीर्थंकरपूर्वभवचित्र संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन माता फल स्वप्न के, पति से पूछे आन।
चित्र बने सुन्दर वहाँ, नृप करते गुणगान।।5।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौशालवेदिकाचित्रसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न्हवन करे जिन बाल का, मेरु पर सौधर्म।
क्षीर नीर के कलश ले, करते हैं निज कर्म।।6।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ जिनस्नपनचित्रसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्री का वैभव सभी, दिखलाए चित्राम।
तीर्थंकर के चरण में, झुककर करें प्रणाम।।7।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिका चक्रवर्तिविभवचित्र संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नारायण बलभद्र अरु, प्रतिनारायण जान।
इनके भव फल का किया, जिसमें लघु गुणगान।।8।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिकायांनारायणबलभद्रादिविभव चित्र संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम मध्यम जघन त्रय, भोगभूमियाँ जान।
दर्शाये हैं चित्र में, इनके युगल महान।।9।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिकायांभोगभूमियुगलचित्रसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इच्छित फल देते सदा, कल्पतरु मनहार।
स्वर्ग प्रथम द्वय तीन चउ, इन्द्र सहित विस्तार।।
खड़े बीच में दोय दो, देवी देव महान।
परम ग्रन्थ सिद्धान्त में, किया विशद गुणगान।।
दिव्य मानस्तम्भ की, रचना विस्मयकार।
वस्त्राभूषण से सहित, मंजूषा मनहार।।
शची निहारे वाल को, करे श्रेष्ठ शृंगार।
शोभित ऐसे चित्र हैं, वैभव अपरम्पार।।10।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ प्राक्चतुःस्वर्गमध्यामानस्तम्भे सुन्दरवस्त्राभूषणयुक्तमंजूषाद्वय संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर्वत बीच समुद्र के, भूमि रही कुभोग।
नर-मुख मेढ़ा बैल गज, अश्व का पाते योग।।
वेदी शाल कंगूर शुभ, गुरजादि संयुक्त।
पञ्चम वेदी रत्नमय, जिनबिम्बों से युक्त।।11।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ वेदिकाशालकंगूरागुरजादि संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शम्भू छन्द)

तापर बैठक श्रेष्ठ रही है, चित्र बने हैं मंगलकार।
कलश ध्वजाएँ लहराती हैं, सुर-नर करते जय-जयकार।।
समवशरण की अतिशय रचना, तीन लोक में रही महान।
विशद भाव से हम परोक्ष ही, करते जिनवर का गुणगान।।12।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ कोटशालवेदिकोपरित्रितलदेवीदेवयुक्तविष्ठर संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्वज भूमि में श्रेष्ठ ध्वजाएँ, फहराती हैं चारों ओर।
कमलाम्बर सिंह गरुड हंसरथ, माला धर्मचक्र वृष मोर।।
दश प्रकार के चिह्न सहित हैं, लघु ध्वजाओं युक्त महान।
सुर नर इन्द्र नरेन्द्र मुनि सब, करते हैं जिन का गुणगान।।13।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ सिंहादिदशभेदचिह्नयुक्त ध्वजासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक ध्वजा पर एक चिह्न है, एक सौ आठ ध्वजा मनहार।
एक सहस अस्सी ध्वज हैं सब, एकदिशा में मंगलकार।।
समवशरण की अतिशय रचना, तीन लोक में रही महान।
विशद भाव से हम परोक्ष ही, करते हैं जिन का गुणगान।।14।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ एकदिशासम्बन्ध्यशीत्यादिकसहस्रध्वजा संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्दिशा में ध्वज की पंक्ति, शोभा देती अपरम्पार।
चार हजार तीन सौ विंशति, फहराती हैं बारम्बार।।
ध्वज स्तम्भ स्वर्णमय अनुपम, शोभित होते जहाँ महान।
धन कुबेर आकर के करता, समवशरण का शुभ निर्माण।।15।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षु त्रिशतविंशत्यधिक चतुःसहस्रमहाध्वजासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाध्वजाओं के संग भाई, लघु ध्वजाएँ हैं मनहार।
चार लाख छोटी ध्वज चउ दिश, फहराती हैं मंगलकार।।
समवशरण की अतिशय रचना, तीन लोक में रही महान।
विशद भाव से हम परोक्ष ही, करते जिनवर का गुणगान।।16।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुर्दिशासु महाध्वजाभिःसह चतुःलक्षपञ्चषष्ठिसहस्रपञ्चशतषष्ठि लघुध्वजासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहस चार अरु बीस तीन सौ, महाध्वजाएँ चारों ओर।
लहर-लहर लहराएँ अनुपम, मन को हर्षित करें विभोर।।
पीत वर्ण हो गया गगन ज्यों, ऐसा होता है आभास।
वातावरण वहाँ का लगता, जैसे आया हो मधुमास।।17।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुर्दिशासु चतुःसहस्रत्रिशतविंशति महाध्वजासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व ध्वजाएँ समवशरण में, चार लाख सत्तर हज्जार।
और आठ सौ अस्सी जानो, रंग-विरंगी मंगलकार।।18।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुर्दिशासु चतुःलक्षसप्ततिसहस्रअष्टशतअसीति महाध्वजासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णमयी खम्भे हैं ध्वज के, अष्टाशीति अंगुलमान।
खम्बों की सुन्दरता अनुपम, आदिजिन की सभा महान।।19।।

ॐ ह्रीं वृषभजिनस्य अष्टाशीत्यगुलप्रमाणसुवर्णमयध्वजास्तम्भसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दण्ड शोभता ऊपर मणिमय, धनु पच्चिस अन्तरतावान।
सहस ध्वजाएँ लहराती हैं, मानो नृत्य करें गुणगान।।20।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ ध्वजासमूहसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

ध्वजभूमि की महिमा न्यारी, मध्य बनी है अनुपम क्यारी।
वाल वापिका गिरि समन्दर, फूल और फल है वृक्षों पर।।

कल्पवृक्ष इच्छित फलदाता, समवशरण सबके मन भाता।
मुनिवर वहाँ गमन कर आवें, चरण-शरण भवि जन भी पावें।।
हम भी प्रभु का ध्यान लगाते, पद में सादर शीश झुकाते।
विशद भाव से महिमा गाते, भक्ति करके हम हर्षाते।।

दोहा- पञ्चम भूमि पूजकर, पाएं पञ्चम ज्ञान।
पञ्चम गति को प्राप्त कर, होय विशद निर्वाण।।21।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ विविधरचनासंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्चम ध्वज भूमि पूजा

(स्थापना)

समवशरण की पञ्चम भूमि, श्रेष्ठ ध्वजाओं सहित महान्।
लहरा करके श्री जिनेन्द्र का, मानो जो करती गुणगान।।
भाँति-भाँति की श्रेष्ठ ध्वजाएँ, फहराती हैं चारों ओर।
भव्य जीव आते हैं जो भी, देख-देख हों भाव-विभोर।।
तीर्थंकर के समवशरण का, करते भावसहित गुणगान।
विशद हृदय के सिंहासन पर, करते जिन प्रभु का आह्वान।।

ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमियुत समवशरणस्थ जिनेन्द्र ! जिन प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमियुत समवशरणस्थ जिनेन्द्र ! जिन प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमियुत समवशरणस्थ जिनेन्द्र ! जिन प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(गीता छन्द)

आत्म तत्त्व के निर्मल जल से, मिथ्यामल का होय शमन।
भेद ज्ञान श्रद्धान पूर्वक, पाएँ हम सम्यक् दर्शन।।

ध्वज भूमि दिखती है सुन्दर, उसमें प्राणी करें गमन।
भाव सहित जिनवर वन्दन से, होते हैं कई कर्म शमन।।1।।

ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमि जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानामृत के शीतल चंदन से, भव भय हो जाय दमन।
सम्यक् ज्ञान प्राप्त करके हम, सफल करें मानव जीवन।।
ध्वज भूमि दिखती है सुन्दर, उसमें प्राणी करें गमन।
भाव सहित जिनवर वन्दन से, होते हैं कई कर्म शमन।।2।।

ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमि जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्ल ध्यान के धवल सुअक्षत से, अक्षय पद करें चयन।
विशद ज्ञान को पाकर हम भी, सिद्ध स्वपद को करें वरण।।
ध्वज भूमि दिखती है सुन्दर, उसमें प्राणी करें गमन।
भाव सहित जिनवर वन्दन से, होते हैं कई कर्म शमन।।3।।

ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमि जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

समरस भावों के पुष्पों से, काम शमन होवे भगवन।
आत्मज्ञान जागृत हो जाए, निज का निज में होय रमण।।
ध्वज भूमि दिखती है सुन्दर, उसमें प्राणी करे गमन।
भाव सहित जिनवर वन्दन से, होते हैं कई कर्म शमन।।4।।

ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमि जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सन्तोषामृत के चरु लेकर, क्षुधा रोग को करे शमन।
तृष्णा भाव नाशकर सारा, तृप्त होय मेरा जीवन।।
ध्वज भूमि दिखती है सुन्दर, उसमें प्राणी करें गमन।
भाव सहित जिनवर वन्दन से, होते हैं कई कर्म शमन।।5।।

ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमि जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेदज्ञान के दीप जलाकर, मोह महातम करें हनन।
केवलज्ञान रवि प्रगटित कर, गुणानन्त को करें वरण।।
ध्वज भूमि दिखती है सुन्दर, उसमें प्राणी करें गमन।
भाव सहित जिनवर वन्दन से, होते हैं कई कर्म शमन।।6।।

ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमि जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान ध्यान की अग्नि जलाकर, अष्ट कर्म का करें दहन।
पूर्ण निर्जरा करके अपने, काटें सभी कर्म बन्धन।।
ध्वज भूमि दिखती है सुन्दर, उसमें प्राणी करें गमन।
भाव सहित जिनवर वन्दन से, होते हैं कई कर्म शमन।।7।।

ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमि जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

महाशील व्रत को पालन कर, मोक्ष महाफल करें वरण।
शुद्ध भाव को पाकर के हम, निजानन्द में रहें मगन।।
ध्वज भूमि दिखती है सुन्दर, उसमें प्राणी करें गमन।
भाव सहित जिनवर वन्दन से, होते हैं कई कर्म शमन।।8।।

ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमि जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय का अर्घ्य मनोहर, भाव सहित करते अर्पण।
पद अनर्घ पाकर के हम भी, मुक्ति वधु का करें वरण।।
ध्वज भूमि दिखती है सुन्दर, उसमें प्राणी करें गमन।
भाव सहित जिनवर वन्दन से, होते हैं कई कर्म शमन।।9।।

ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमि जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- प्रातिहार्य शोभित महा, जगत वंद्य जिनदेव।
नतमस्तक होकर प्रभो !, करें चरण की सेव।।

(चौपाई)

धर्म ध्वजा भूमि मनहारी, पञ्चम जानो अतिशयकारी।
तृतीय कोट घेरता जानो, परिवेष्टित चउदिश में मानो।।
ऊँची-ऊँची रही ध्वजाएँ, मनमोहक चउदिश फहराएँ।
सुर नर मुनिवर का मन मोहें, पावन अतिशयकारी सोहें।।
चहुँ दिश ध्वज भू में दश जानो, सुन्दर मंगलकारी मानो।
एक सौ आठ हैं महाध्वजाएँ, भवि जीवों के मन को भाएँ।।
लघु ध्वजाएँ भी पहिचानो, एक सौ आठ सभी में मानो।
महिमा जिनकी कही न जाए, मानो जिन की महिमा गाए।।
वृषभ मोर सिंह हाथी जानो, हंस कमल रवि को पहिचानो।
माला रथ अरु गरुड़ कहाये, चिह्न ध्वजाओं में दश गाए।।
सत्तर सहस लक्ष चउ जानो, आठ सौ अस्सी अधिक बखानो।
ध्वज भूमि में रहीं ध्वजाएँ, देना कठिन रहा उपमाएँ।
अनुपम है ध्वज भूमि भाई, सुख-शांति सौभाग्य प्रदायी।।
रजत कोटमय अतिशय सोहे, सुर नर मुनि के मन को मोहे।
द्वारपाल चउ द्वार खड़े हैं, भक्ति करने वहाँ अड़े हैं।।
जिन की महिमा को दर्शाते, द्वार खड़े मन में हर्षाते।।

दोहा- समवशरण में पञ्चमी, ध्वज भूमि है नाम।
जिनवर शोभे मध्य में, बारम्बार प्रणाम।।

ॐ ह्रीं पञ्चम ध्वज भूमि जिनप्रतिमाभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- करते हैं हम वन्दना, जिन चरणों में आन।
अष्ट द्रव्य से पूजते, 'विशद' करें गुणगान।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

षष्ठम कल्पवृक्ष भूमि वर्णन

(चौपाई)

गली भूमि छठवीं में जानो, दाएँ-बाएँ जिसके मानो।
अन्दर द्वार के पास में भाई, नाटकशाला है सुखदाई।।1।।

ॐ ह्रीं षष्ठ भूमेः गल्यां वामदक्षिण भागे अनन्तर गल्याः द्वारे नाट्यशाला संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीजा कोट का दूजा भाग, चौथी वेदी रहा विभाग।
भूमि चवालिस वलय व्यास, व्याप्त दृगों से है जो खास।।2।।

ॐ ह्रीं तुर्यभागतृतीयसालभागद्वयचतुर्थवेदिकामध्ये चतुःचत्वारिंशद्भाग वलयव्यासभूमि संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचन सम है तृतीय शाल, ध्वजा कंगूरे बने विशाल।
गोख में तिहरी बैठक जान, सुर विद्याधर करते ध्यान।।3।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्ततृतीयसाल संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौथी वेदी है मनहार, पीतवर्ण में अपरम्पार।
बैठक गुरज में रही प्रधान, नर मुनि करते निज कल्याण।।4।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तचतुर्थवेदिकासंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बीच भूमि का वर्णन शेष, विदिशा में बन रहे विशेष।
कल्पवृक्ष सोहें मनहार, संकटनाशी मंगलकार।।5।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमिं परितः कल्पवृक्षसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इच्छित वस्तु करें प्रदान, कल्पवृक्ष जो रहे महान।
दश प्रकार के सुरतरु खास, पूरी करते मन की आस।।6।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ मनोवांछित वस्तुदायक कल्पवृक्ष संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बर्तन गृह आभूषण भाई, वस्त्र वाद्य भोजन सुखदाई।
दीप माल पानांग प्रधान, ज्योतिरांग दश वृक्ष महान।।7।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमि दशप्रकार कल्पवृक्षसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चाल छन्द)

चारों दिश सुरतरु जानो, मंदिर सुखकारी मानो।
शुभ ताल वापिका भाई, जिनवर सोहें सुखदाई।।8।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ वापिकाद्रहमन्दिरसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है चन्द्रकांत सम भाई, स्फटिक शिला सुखदाई।
जिस पर मुनिराज विराजे, जो ज्ञान ध्यान में साजे।।9।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ ध्यानस्थमुनिगणयुक्तचन्द्रकान्तशिलासंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है मोह कर्म अघकारी, जिसके हैं आप प्रहारी।
हैं व्रत संयम के धारी, जो पुण्य के हैं अधिकारी।।10।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ आत्मध्यानयुक्तपुण्यसम्पादकमहामुनि-संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु समवशरण में आवें, सबको संदेश सुनावें।
गुरुवर आचार्य हमारे, भव्यों के बने सहारे।।11।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ विविधस्थानेषु धर्मोपदेशकदिगम्बरयतिसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर्वत की रचना जानो, उन पर मुनियों को मानो।
निज आतम ध्यान लगाते, अपने सब कर्म जलाते।।12।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ ध्यानारूढ़यतियुक्तपर्व संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कई देव यहाँ मिल आते, क्रीड़ा करके हर्षाते।
मुनिपद में ढोक लगाते, जो भाव सहित गुण गाते।।13।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ स्वपरोपकारदिगम्बरयतिसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वन भूप मध्य में जानो, चऊ चतुर्दिशा में मानो।
दर्शन से पाप नशावें, भवि प्राणी पुण्य कमावें।।14।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ चतुर्दिशासुवनमध्येचतुर्भूपवृक्ष-संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन वचन काय के द्वारा, है भूप वृक्ष मनहारा।
बारहदरि शोभा पावे, कर दर्श जीव हर्षावे।।15।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ एकदिशवनमध्ये द्वादशद्वारी संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रचना है विविध निराली, बारहदरी शोभा वाली।
कुरसी सिंहासन जानो, ऐसे दिखते हैं मानो।।16।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तद्वादशद्वारी-संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊँचे हैं शिखर निराले, मणियों से दमकने वाले।
शुभ कलश ध्वजाएँ भारी, लहराती हैं मनहारी।।17।।

ॐ ह्रीं उच्चशिखरादिविविधरचनायुक्तद्वादशद्वारी-संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मालाएँ हैं रत्नों वाली, मोती की दमकने वाली।
सुर नर विद्याधर आवें, भक्ति कर पुण्य कमावें।।18।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रगुणगायक देवयुक्तद्वादशद्वारी संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ तीन कोट मनहारी, है मध्य पीठ अति प्यारी।
महिमा सुनकर हम आए, प्रभु पद में शीश झुकाए।।19।।

ॐ ह्रीं द्वादशद्वार्यामसालत्रयमध्ये सिंहासनपीठत्रय-संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग शोभा सुखदायी, भव्यों की पीठ में भाई।
त्रय पीठ के ऊपर जानो, शुभ भूप वृक्ष पहिचानो।।20।।

ॐ ह्रीं पीठत्रयोपरि भूपवृक्षसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हीरे की जड़ है भाई, मणिमय शाखा सुखदाई।
पत्ते पन्नों के जानो, शुभ स्वर्ण पुष्प पहिचानो।।21।।

ॐ ह्रीं विविधपुष्पयुक्त भूपवृक्षसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं लाल फूल मनहारी, फल हैं मीठे शुभकारी।
शुभ भूपवृक्ष जिन गाया, अतिशयकारी कहलाया।।22।।

ॐ ह्रीं विविधपुष्पयुक्त भूपवृक्षसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर से सुर तरु जानो, द्वादश गुण ऊँचा मानो।
है समवशरण मनहारी, मंगलमय रहा सुखारी।।23।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ जिनशरीरद्वादशगुणोच्च-भूपवृक्षसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- चतुर्दिशा में वृक्ष के, दर्श प्रभु का होय।
गलित मानस्तम्भ से, मानी का भी सोय।।24।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमिचतुर्दिशा चतुःचतुः मन्दिर स्थित भूपवृक्षसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक वृक्ष का जो किया, वर्णन यहाँ प्रधान।
चारों ही दिश जानिए, वृक्षों की पहिचान।।25।।

ॐ ह्रीं प्रथम भूपवृक्ष समानशेष भूपवृक्षत्रय संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु वृक्ष आग्नेय में, वायव में सन्तान।
नैऋत्य में मन्दार है, पारिजात ईशान।।26।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौचतुर्विदिशासु मेरुवृक्षादिचतुर्भूपवृक्ष-संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्ठम भूमि कल्पवृक्ष पूजा

(स्थापना)

कल्पवृक्ष भूमि है छटवी, जिसमें मेरु वृक्ष महान।
शोभित हैं जिनबिम्ब चतुर्दिक, शाखाओं पर अतिशयवान।।
भव्य जीव अर्चा करते हैं, घूम-घूमकर चारों ओर।
आह्वानन करते हम उर में, जिनबिम्बों का भाव विभोर।।

दोहा- मेरु वृक्ष अतिशय रहा, सिद्ध बिम्ब से युक्त।
पूजा करते भाव से, हो विकल्प से मुक्त।।

ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(वीर छन्द)

पर्याय बुद्धि होकर के हमने, पर्यायों में परिणमन किया।
जन्मादि रोगों में फँसकर, चारों गतियों में भ्रमण किया।।
अब चेतन तत्त्व प्रकट करने, यह निर्मल जल भर लाए हैं।
हम जिनबिम्बों की अर्चा का, सौभाग्य जगाने आए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या ज्ञानी ध्यानी बनकर, नित नये कर्म का सृजन किया।
संसार ताप से तप्त हुए, तीनों लोकों में गमन किया।।
अब चेतन तत्त्व प्रकट करने, यह चन्दन घिसकर लाए हैं।
हम जिनबिम्बों की अर्चा का, सौभाग्य जगाने आए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के पदार्थ नश्वर दिखते, पल-पल जिनका क्षय होता है।
हैं सिद्ध सनातन अविनाशी, उस पद का न क्षय होता है।।
अब चेतन तत्त्व प्रकट करने, हम अक्षय अक्षत लाए हैं।
हम जिनबिम्बों की अर्चा का, सौभाग्य जगाने आए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

विषयों की आशा में फँसकर, ये मन मधुकर भरमाया है।
चारों गतियों के भोग किए, पर तृप्त नहीं हो पाया है।।
अब चेतन भोग प्रकट करने, यह पुष्प सुगन्धित लाए हैं।
हम जिनबिम्बों की अर्चा का, सौभाग्य जगाने आए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के भोगों को भोगा है, पर पूर्ण नहीं हो पाए हैं।
करके कई जीवन पूर्ण स्वयं, निज गलती पर पछताए हैं।।

अब चेतन भोग प्रकट करने, यह नैवेद्य मनोहर लाए हैं।
हम जिनबिम्बों की अर्चा का, सौभाग्य जगाने आए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महिमा है मोह कर्म की यह, निज का स्वभाव विसराता है।
जो भिन्न रहे हमसे पदार्थ, उनमें आसक्ति बढ़ाता है।।
अब चेतन शक्ति जगाने को, यह दीप जलाकर लाए हैं।
हम जिनबिम्बों की अर्चा का, सौभाग्य जगाने आए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों कर्मों के नाग हमें, पल-पल ही डसते रहते हैं।
मोहान्ध बने हम अज्ञानी, घन घात स्वयं ही सहते हैं।।
अब चेतन तत्त्व प्रकट करने, शुभ धूप जलाने लाए हैं।
हम जिनबिम्बों की अर्चा का, सौभाग्य जगाने आए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नित नूतन फल हर ऋतुओं के, मेरे मन को ललचाते हैं।
हम अटके कर्मों के फल में, न मोक्ष महाफल पाते हैं।।
अब मोक्ष महाफल पाने को, यह सरस श्रेष्ठ फल लाए हैं।
हम जिनबिम्बों की अर्चा का, सौभाग्य जगाने आए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हमने पुरुषार्थ भुलाकर के, गतियों में चक्कर खाए हैं।
विषयों की दाह जली हरदम, हम उसमें जलते आए हैं।।
अब पद अनर्घ पाने हेतु, शुभ अर्घ्य बनाकर लाए हैं।
हम जिनबिम्बों की अर्चा का, सौभाग्य जगाने आए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं मेरुवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्ठम भूमि मन्दारवृक्ष पूजा

(स्थापना)

कल्पवृक्ष भूमि में अनुपम, कल्पवृक्ष सोहे मंदार।
शोभित है जिनबिम्ब चतुर्दिक, शाखाओं पर अतिशयकार।।
भव्य जीव अर्चा करते हैं, घूम-घूमकर चारों ओर।
आह्वानन करते हम उर में, पुलकित होकर भाव विभोर।।

दोहा- मेरु वृक्ष मंदार है, सिद्ध बिम्ब से युक्त।
पूजा करते भाव से, हो विकल्प से मुक्त।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(दोहा)

यह क्षीरोदधि का नीर, उत्तम भर लाए।
हम जन्म-जरा का नाश, करने को आए।।1।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह मलयागिरि का श्रेष्ठ, चंदन घिसलाए।
हो भव आताप विनाश, शरण में हम आए।।2।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह अक्षत धवल महान, थाल में भरलाए।
पाने अक्षय पद श्रेष्ठ, चढ़ाने को आए।।3।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

करने को काम विनाश, पुष्प कर में लाए।
यह परम सुगन्धित फूल, चढ़ाने को आए।।4।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लेकर ताजे नैवेद्य, चढ़ाने को लाए।
है क्षुधा अनादि रोग, नशाने हम आए।।5।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह रत्नमयी शुभ दीप, जलाकर हम लाए।
हो जावे मोह विनाश, शरण में हम आए।।6।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

यह परम सुगन्धित धूप, चढ़ाने को लाए।
करने कर्मों का नाश, शरण में हम आए।।7।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल यह ताजे हैं श्रेष्ठ, थाल में भर लाए।
शुभ मोक्ष महाफल प्राप्त, करन को हम आए।।8।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अष्ट द्रव्य का अर्घ्य, बनाकर यह लाए।
हो पद अनर्घ पद प्राप्त, शरण में हम आए।।9।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्ठम भूमि संतानवृक्ष पूजा

(स्थापना)

कल्पवृक्ष भूमि है पावन, संतानक तरु रहा महान।
सिद्ध बिम्ब शोभित हैं चहुँदिश, शाखाओं पर महिमावान।।
भव्य जीव अर्चा करते हैं, घूम-घूमकर चारों ओर।
आह्वानन करते हम उर में, जिनबिम्बों का भाव विभोर।।

दोहा- संतानक सुर वृक्ष है, सिद्ध बिम्ब से युक्त।
पूजा करते हम यहाँ, हो विकल्प से मुक्त।।

ॐ ह्रीं संतानक भूपवृक्षस्य चतुर्दिशाना जिन प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं संतानक भूपवृक्षस्य चतुर्दिशाना जिन प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं संतानक भूपवृक्षस्य चतुर्दिशाना जिन प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(गीता छन्द)

विषयों के विष को पीकर के, जीवन कई व्यर्थ गँवाए हैं।
अब जन्म-मरण के रोगों से, छुटकारा पाने आए हैं।।
शुभ कल्पवृक्ष के जिनबिम्बों की, पूजा के सौभाग्य मिलें।
प्रभु हृदय सरोवर में मेरे, श्रद्धा के अनुपम पुष्प खिलें।।1।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम संतापित भव बन्धन से, सुध-बुध अपनी खोते आए।
अब भव सन्ताप मिटाने को, चन्दन चर्चन को हम लाए।।
शुभ कल्पवृक्ष के जिनबिम्बों की, पूजा के सौभाग्य मिलें।
प्रभु हृदय सरोवर में मेरे, श्रद्धा के अनुपम पुष्प खिलें।।2।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कर करके पञ्च परावर्तन, चारों गतियों में भटकाए।
हम अक्षत यहाँ चढ़ाते हैं, अब अक्षय निधि पाने आए।।
शुभ कल्पवृक्ष के जिनबिम्बों की, पूजा के सौभाग्य मिलें।
प्रभु हृदय सरोवर में मेरे, श्रद्धा के अनुपम पुष्प खिलें।।3।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रिय सुख की आशाओं में, निज का अनुभव न कर पाए।
अब आकुलता तजने मन की, यह पुष्प चढ़ाने हम लाए।।
शुभ कल्पवृक्ष के जिनबिम्बों की, पूजा के सौभाग्य मिलें।
प्रभु हृदय सरोवर में मेरे, श्रद्धा के अनुपम पुष्प खिलें।।4।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खाए पदार्थ त्रय लोकों के, फिर भी न क्षुधा मिटा पाए।
अब क्षुधा रोग के शमन हेतु, नैवेद्य चढ़ाने हम आए।।
शुभ कल्पवृक्ष के जिनबिम्बों की, पूजा के सौभाग्य मिलें।
प्रभु हृदय सरोवर में मेरे, श्रद्धा के अनुपम पुष्प खिलें।।5।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देखा है तन को दर्पण में, चेतन का दर्श न कर पाए।
अब मोह अंध के नाश हेतु, यह दीप जलाकर हम लाए।।
शुभ कल्पवृक्ष के जिनबिम्बों की, पूजा के सौभाग्य मिलें।
प्रभु हृदय सरोवर में मेरे, श्रद्धा के अनुपम पुष्प खिलें।।6।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्यों क्षीर में घृत मिलकर रहता, त्यों तन में चेतन मिल जाए।
हों अष्ट कर्म नोकर्म नाश, हम धूप जलाने को लाए।।
शुभ कल्पवृक्ष के जिनबिम्बों की, पूजा के सौभाग्य मिलें।
प्रभु हृदय सरोवर में मेरे, श्रद्धा के अनुपम पुष्प खिलें।।7।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

परिजन पुरजन की सेवा में, हमने कई जन्म बिताए हैं।
हम सरस श्रेष्ठ फल चढ़ा रहे, मुक्ति फल पाने आए हैं।।
शुभ कल्पवृक्ष के जिनबिम्बों की, पूजा के सौभाग्य मिलें।
प्रभु हृदय सरोवर में मेरे, श्रद्धा के अनुपम पुष्प खिलें।।8।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्योतिर्मय जीवन करने को, यह अर्घ्य बनाकर हम लाए।
यह अर्घ्य बनाया है अनुपम, अब पद अनर्घ पाने आए।।
शुभ कल्पवृक्ष के जिनबिम्बों की, पूजा के सौभाग्य मिलें।
प्रभु हृदय सरोवर में मेरे, श्रद्धा के अनुपम पुष्प खिलें।।9।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्ठम भूमि पारिजातवृक्ष पूजा

(स्थापना)

कल्पवृक्ष भूमि है अनुपम, पारिजात तरु अपरम्पार।
शोभित हैं जिनबिम्ब मनोहर, चतुर्दिशा में मंगलकार।।
भव्य जीव अर्चा करते हैं, घूम-घूमकर चारों ओर।
आह्वानन करते हम उर में, जिनबिम्बों का भाव विभोर।।

दोहा- पारिजात सुर वृक्ष है, सिद्ध बिम्ब से युक्त।
पूजा करते हम यहाँ, हो विकल्प से मुक्त।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाः अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल छन्द)

भर लाए जल की झारी, जन्मादि नाशनकारी।
जीवन हो मंगलकारी, शिवपद पाएँ अविकारी।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन की महके क्यारी, भव ताप विनाशनहारी।
जीवन हो मंगलकारी, शिवपद पाएँ अविकारी।।2।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत लाए मनहारी, पद पाएँ अक्षयकारी।
जीवन हो मंगलकारी, शिवपद पाएँ अविकारी।।3।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

यह पुष्प श्रेष्ठ शुभकारी, हैं काम विनाशनकारी।
जीवन हो मंगलकारी, शिवपद पाएँ अविकारी।।4।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य सरस बनवाए, हम क्षुधा नशाने आए।
जीवन हो मंगलकारी, शिवपद पाएँ अविकारी।।5।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है दीप प्रकाशनकारी, मोहान्ध नशावनकारी।
जीवन हो मंगलकारी, शिवपद पाएँ अविकारी।।6।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दश गंध धूप की थारी, है कर्म नशावनहारी।
जीवन हो मंगलकारी, शिवपद पाएँ अविकारी।।7।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

यह फल लाए मनहारी, है मोक्ष सुफल कर्त्तारी।
जीवन हो मंगलकारी, शिवपद पाएँ अविकारी।।8।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम द्रव्य मिलाए सारी, पाने को पद शिवकारी।
जीवन हो मंगलकारी, शिवपद पाएँ अविकारी।।9।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

अथ जयमाला

दोहा- समवशरण की कल्प भू, मनवांछित फलदाय।
जय-जय जयमाला रचें, गाएँ मन वच काय।।

(छन्द-चौपाई)

जय-जय समवशरण हितकार, परम शांति का है दातार।
जो भवि ध्यावें मन-वच-काय, क्षायिक लब्धि सदा ही पाय।।
जय-जय कल्प वृक्ष भू जाय, जिनवर महिमा शिवसुख दाय।
चतुर्दिशा में चार प्रकार, भूप वृक्ष सोहें मन्दार।।
देय पानांग बहुविधि पेय, तूर्यांग वाद्य मृदंग सुदेय।
भूषणांग से भूषण पाय, भोजनांग भोजन दिलवाय।।
वस्त्रांग बहुविध वस्त्र प्रदान, आलयांग आलय का दान।
दीपक देय दीपांग विशेष, भाजनांग भाजन दे शेष।।
मालांग सुरभित पुष्प सुमाल, देय तेज तेजांग विशाल।
कल्पवृक्ष पृथ्वी मनहार, जल से पूरित है सुखकार।।
चहुँदिश तरु सिद्धार्थ अनेक, उन्नत अरु सुन्दर प्रत्येक।
द्वादश गुणित वृक्ष पहिचान, प्रभु के तन से उच्च महान।।
प्रेक्षागृह अति सुन्दर जान, क्रीड़नशाला शोभावान।
तरु सिद्धार्थ के मूल प्रदेश, चहुँदिश सिद्ध बिम्ब के देश।।
तीन कोट वेष्टित सुविशाल, पीठ त्रय बहुविध गुणमाल।
मणिमय पीठ सुसुन्दर जान, सिद्ध बिम्ब हैं महिमावान।।
सिद्धबिम्ब मणिमय शुभ जान, पूजत कर्म होय क्षयमान।
जय-जय कल्पभूमि हितदाय, चहुँदिश मंगलमय सुखदाय।।
जिनवर महिमा अपरम्पार, भवदुःख से कर देवे पार।
कल्पभूमि पावन शुभ जान, पूजा राज्य आदि फलदान।।

अनुक्रम से शिवपद दातार, सुख अनन्त का है आधार।
सिद्धशिला पर होय निवास, काल अनन्तानन्त हो वास।।

दोहा- कल्पभूमि पूजो सदा, भाव भक्ति के साथ।
जिनपद सम संपद मिले, बने श्री का नाथ।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरणस्थित कल्पभूमि सम्बन्धि सर्व सिद्धार्थ वृक्षमूलभाग विराजमान सिद्ध प्रतिमाभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

श्री जिन चौबीसों तीर्थंकर, तीन लोक में अपरम्पार।
अर्चा करते समवशरण की, अष्ट द्रव्य से मंगलकार।।
वह धन-धान्य सौख्य समृद्धि, अतिशय पाते ज्ञान अपार।
दिव्य भोग इन्द्र अहमिन्द्र इन्द्र पद, क्रमशः पाते मुक्ति का द्वार।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

सप्तम भूमि वर्णन

(शम्भू छन्द)

समवशरण की सप्तम भूमि, रत्नमयी स्तूप महान।
मणि खचित है चौथी वेदी, द्वार सजे हैं अतिशयवान।।
श्रेष्ठ कंगूरे घंटे बाजें, जिसकी महिमा अपरम्पार।
इन्द्र-नरेन्द्र चरण में आकर, वन्दन करते बारम्बार।।1।।

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि गल्यास्तूपवाम दक्षिणभागे अन्तर गल्याः द्वारे आभ्यन्तर चतुर्थ वेदिका संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वेदी में चित्रों की रचना, लख पापों का हो गालन।
सम्यक् रीति ज्ञान प्राप्त हो, कर्त्तव्यों का हो पालन।।

समवशरण में जाकर प्राणी, सुख पाते हैं अपरम्पार।
इन्द्र-नरेन्द्र चरण में आकर, वन्दन करते बारम्बार।।2।।

ॐ ह्रीं विविधचित्रयुक्त चतुर्थवेदिका संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्दी गर्मी वर्षा पाकर, मुनिवर ध्यान लगाते हैं।
पर्वत पर एकाग्रचित्त हों, चित्रों में दर्शाते हैं।।
समवशरण में दिव्य देशना, सुख पाते हैं अपरम्पार।
इन्द्र-नरेन्द्र चरण में आकर, वन्दन करते बारम्बार।।3।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थवेदिका चतुर्थशालमध्ये धर्मोपदेशकयति संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूमि देखकर चलने वाले, निज स्वभाव में रहते लीन।
कठिन परीषह सहते हैं जो, अविकारी मुनि ज्ञान प्रवीण।।
श्रावक दान देय जिस गृह में, रत्न वृष्टि हो अपरम्पार।
इन्द्र-नरेन्द्र चरण में आकर, वन्दन करते बारम्बार।।4।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थवेदिका चतुर्थशालमध्ये आत्मलीन दिगम्बरयतिसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लौकान्तिक वैराग्य बढ़ाएँ, ऐसे बने हुए हैं चित्र।
नभ में मेघ घटा उठ आयी, सूर्य छिपे ज्यों दिखें विचित्र।।
श्याम श्वेत अरु लाल बैंगनी, रंग प्रयंगु के मनहार।
वृक्षों पर ज्यों मोर कुहुकती, बिजली चमके विस्मयकार।।
समवशरण में जाकर प्राणी, सुख पाते हैं अपरम्पार।
इन्द्र-नरेन्द्र चरण में आकर, वन्दन करते बारम्बार।।5।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ नानाविविधचित्रविचित्रचतुर्थवेदिकासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गगन मध्य में सूर्य चमकने, से होता ज्यों उजियारा।
चौथे शाल भाग चौथे में, वर्ण दमकता है न्यारा।।
समवशरण में जाकर प्राणी, सुख पाते हैं अपरम्पार।
इन्द्र-नरेन्द्र चरण में आकर, वन्दन करते बारम्बार।।6।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थशालचतुर्भागश्वेतवर्णचतुर्थवेदिकासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हीरों के खम्भे कंचनमय, रत्नजड़ित सोहे मनहार।
वलय व्यास के वर्णन संयुक्त, चित्र बने हैं विस्मयकार।।
समवशरण में जाकर प्राणी, सुख पाते हैं अपरम्पार।
इन्द्र-नरेन्द्र चरण में आकर, वन्दन करते बारम्बार।।7।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ द्वाविंशतिभागवलयव्यासयुक्त मन्दिर-पंक्तिसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुखनी तिखनी और चौसनी, बैठक सुन्दर शोभादार।
दल परदा मौतिन की झालर, सुर विद्याधर नचें अपार।।
समवशरण में जाकर प्राणी, सुख पाते हैं अपरम्पार।
इन्द्र-नरेन्द्र चरण में आकर, वन्दन करते बारम्बार।।8।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ विविध रचनायुक्त जिनमन्दिरसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदिर पंक्तिबद्ध शोभते, शिखर कलश सोहें मनहार।
स्वर्ण दण्ड में जड़े हैं हीरे, शोभा देते अपरम्पार।।
समवशरण में जाकर प्राणी, सुख पाते हैं अपरम्पार।
इन्द्र-नरेन्द्र चरण में आकर, वन्दन करते बारम्बार।।9।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ एवम्विधानेकरचनासंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बैठक में कई देव-देवियाँ, भक्ति करते मंगलकार।
जो मुहचंग मृदंग बजाते, बीन बजाते हैं मनहार।।
कहीं नृत्य शालाएँ अनुपम, नृत्यगान हो अपरम्पार।
इन्द्र-नरेन्द्र चरण में आकर, वन्दन करते बारम्बार।।10।।

ॐ ह्रीं एवंविधानेकरचना संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

तिन मंदिर के बीच में भाई, कुर्सीदार चौक सुखदाई।
रत्नजड़ित सोपान निराले, मंदिर ऊपर कलशों वाले।।11।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ मन्दिर मध्यचतुष्कोपरिमण्डप संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बने सहस खम्बे हैं भाई, ऊपर चौक रहा सुखदाई।
सजा हुआ मण्डप मनहारी, महिमा है अति विस्मयकारी।।12।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ मध्यचतुष्कोपरिण्डपसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वार सजे तोरण से भाई, रत्नमई माला सुखदाई।
झक-झक ज्योति जले मनहारी, पुष्प शोभते मंगलकारी।।13।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ श्रीमण्डपसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधकुटी सुन्दर सुखकारी, सिंहासन युत सुभग है न्यारी।
सिर पर छत्र शोभते भाई, महिमा जिनवर की सुखदाई।।14।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ श्रीमण्डप केवलीजिनसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुत केवली बैठे ज्ञानी, दिव्य देशना दे सुखदानी।
ज्ञानदीप जलते हैं भाई, प्रभु की है जग में प्रभुताई।।15।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ श्रीमण्डप श्रुतकेवलीसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

झालर मोती की शुभ गाई, वन्दनवार बंधे सुखदाई।
जिनवाणी का सार बतावें, भव्य जीव सुनकर सुख पावें।।16।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ विविधरचनासंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महिमा जिनवर की यह गाई, आगम के परिप्रेक्ष्य में भाई।
लघु शब्द लघु धी से जानो, महिमा विशद प्रभु की मानो।।17।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ श्रीमण्डपेकेवली दिव्यध्वनिसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्त कई मंदिर में आते, अपनी श्रद्धा भक्ति बढ़ाते।
बीन बजाकर नाचे-गावें, जिनपद में निज शीश झुकावें।।18।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ सुर-नर-विद्याधरभक्तिसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर-नर भक्ति करते भारी, पाप पंक की नाशनहारी।
गुण गाते जिन के सब प्राणी, जिन भक्ति जग की कल्याणी।।19।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ सुर-भक्ति संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञान पूजा

(स्थापना)

चार घातिया कर्म नाशकर, केवलज्ञान प्रकाश किया।
सप्तम भूमि के आगे प्रभु, निज आतम में वास किया।।
सुर नर पशु सब अर्चा करते, दिव्य देशना पाते हैं।
केवलज्ञानी बनने की वह, सतत् भावना भाते हैं।।
तीन लोक में पूज्य कहा है, अतिशयकारी केवलज्ञान।
विशद हृदय के सिंहासन पर, हम भी करते हैं आह्वान।।

ॐ ह्रीं केवलज्ञान संयुक्त जिनेन्द्र जिन प्रतिमाः ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं केवलज्ञान संयुक्त जिनेन्द्र जिन प्रतिमाः ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं केवलज्ञान संयुक्त जिनेन्द्र जिन प्रतिमाः ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(गीता छन्द)

कुमति ज्ञान के कारण निज का, भान नहीं कर पाए हैं।
जन्म-जरा के नाश हेतु हम, नीर चढ़ाने लाए हैं।।
विशद ज्ञान पाने को हम भी, पूजा करने आए हैं।
केवलज्ञान प्राप्त हो हमको, यही भावना भाए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुश्रुत ज्ञान प्राप्त कर हमने, जीवन कई बिताए हैं।
भव आताप विनाश हेतु हम, चन्दन घिसकर लाए हैं।।
विशद ज्ञान पाने को हम भी, पूजा करने आए हैं।
केवलज्ञान प्राप्त हो हमको, यही भावना भाए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हमने कुअवधि ज्ञान को पाकर, पर मत सब अपनाए हैं।
अक्षय पद पाने को अक्षत, यहाँ चढ़ाने लाए हैं।।
विशद ज्ञान पाने को हम भी, पूजा करने आए हैं।
केवलज्ञान प्राप्त हो हमको, यही भावना भाए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मतिज्ञान से इन्द्रिय विषयों, को पाकर अकुलाए हैं।
कामवासना नाश हेतु हम, पुष्प चढ़ाने लाए हैं।।
विशद ज्ञान पाने को हम भी, पूजा करने आए हैं।
केवलज्ञान प्राप्त हो हमको, यही भावना भाए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुतज्ञान से जाना जग को, फिर भी जग भटकाए हैं।
क्षुधारोग के नाश हेतु, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।।
विशद ज्ञान पाने को हम भी, पूजा करने आए हैं।
केवलज्ञान प्राप्त हो हमको, यही भावना भाए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अवधिज्ञान पाकर भी जग के, पर पदार्थ अपनाए हैं।
विशद ज्ञान का दीप जलाने, दीप जलाकर लाए हैं।।
विशद ज्ञान पाने को हम भी, पूजा करने आए हैं।
केवलज्ञान प्राप्त हो हमको, यही भावना भाए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान मनःपर्यय पाकर हम, मन से चेत न पाए हैं।
अष्ट कर्म के नाश हेतु हम, धूप जलाने लाए हैं।।
विशद ज्ञान पाने को हम भी, पूजा करने आए हैं।
केवलज्ञान प्राप्त हो हमको, यही भावना भाए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञानावरण कर्म से, ज्ञान जगा न पाए हैं।
मोक्ष महाफल पाने हेतु, सरस-सरस फल लाए हैं।।
विशद ज्ञान पाने को हम भी, पूजा करने आए हैं।
केवलज्ञान प्राप्त हो हमको, यही भावना भाए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानावरणी कर्म के द्वारा, सर्व जगत भरमाए हैं।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें हम, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।।

विशद ज्ञान पाने को हम, भी पूजा करने आए हैं।
केवलज्ञान प्राप्त हो हमको, यही भावना भाए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- केवलज्ञानी ज्ञान से, जानें लोक त्रिकाल।
पाने केवलज्ञान हम, गाते हैं जयमाल।।

(चौपाई)

ज्ञानी ध्यानी जग हितकारी, सर्वजगत में मंगलकारी।
विश्ववंद्य तुम निज के जेता, कर्मों के तुम हुए विजेता।।
धन वैभव तज के व्रत धारे, हुए दिगम्बर गगन सहारे।
वस्त्राभूषण जग को दीन्हे, गुण आभूषण धारण कीन्हे।।
गुप्ति समिति प्रभु को भाए, अनुप्रेक्षा परिषह जय पाए।
काम क्रोध प्रभु तुमसे हारा, क्षमा धर्म को उर में धारा।।
उत्तम संयम हृदय सजाए, सम्यक् तप कर कर्म नशाए।
धर्म अहिंसा सबसे प्यारा, दिया जगत को तुमने नारा।।
श्रेण्यारोहण करके स्वामी, बन जाते मुक्ति पथगामी।
कर्म घातिया प्रभुजी नाशे, अनुपम केवलज्ञान प्रकाशे।।
धन कुबेर तव चरणों आवे, समवशरण अतिशय बनवावे।
हीरा मोती मुक्ता मणियाँ, सर्वश्रेष्ठ रत्नों की लड़ियाँ।।
स्वर्ण रजत पन्ना के द्वारा, श्रेष्ठ सजाते प्यारा-प्यारा।
मानस्तम्भ द्वार पर शोभे, गलित मान मानी का होवे।।
प्रभु के समवशरण में भाई, होते हैं अतिशय सुखदाई।
रोगी अपने रोग नशाते, दीन-हीन बल शक्ति जगाते।।

केवलज्ञान की महिमा न्यारी, तीन लोक में अतिशयकारी।
गुण पर्याय द्रव्य को जाने, व्यय उत्पाद ध्रौव्य सत् माने।।
ज्ञान में निर्मलता मम आए, विशद ज्ञान मेरा जग जाए।
मोक्ष महाफल को हम पाएँ, सिद्धशिला पर धाम बनाएँ।।

दोहा- अनुगामी हम आपके, चरण लगाए आस।
विशद ज्ञान का हो प्रभो !, मेरे ज्ञान प्रकाश।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- दर्पणवत् तव ज्ञान में, झलके लोकालोक।
दर्श किए प्रभु आपका, मिटे राग अरु शोक।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

स्तूप पूजा (पूरब दिशा)

(स्थापना)

समवशरण की शोभा अनुपम, वर्णन करना कठिन रहा।
भाव सहित अर्चा करते हैं, सुर नर मुनिगण श्रेष्ठ अहा।।
पूरब में स्तूप शोभते, सप्तम भू में अपरम्पार।
अनुपम सिद्ध बिम्ब हैं जिसमें, जनहितकारी मंगलकार।।

दोहा- पूज्य रहे त्रय लोक में, श्री जिनबिम्ब महान।
विशद हृदय में हम करें, भावसहित आह्वान।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(गीता छन्द)

चेतन भावों की निर्मलता, प्रकट होय मेरी भगवन।
जन्म-जरा का रोग नाश हो, छूट जाय भव का बन्धन।।
जिनबिम्बों की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।
अक्षय शिवपद पाने के शुभ, हमने भाव बनाए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

विषयों से चित्त हटे मेरा, नित चेतन का होवे चिन्तन।
हो कामवासना नाश प्रभो !, हम अर्पित करते हैं चंदन।।
जिनबिम्बों की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।
अक्षय शिवपद पाने के शुभ, हमने भाव बनाए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् श्रद्धा के द्वारा हम, आत्मज्ञान को करें वरण।
प्राप्त होय अक्षयपद अनुपम, सफल होय मानव जीवन।।
जिनबिम्बों की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।
अक्षय शिवपद पाने के शुभ, हमने भाव बनाए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

महाशील का पालन करके, चित् चेतन का करें मनन।
कामरोग का नाश करें फिर, मैट सकें हम जन्म-मरण।।
जिनबिम्बों की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।
अक्षय शिवपद पाने के शुभ, हमने भाव बनाए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सन्तोषामृत पान करें हम, जीवन यह हो जाय चमन।
चिर तृष्णा पर विजय प्राप्तकर, निजानन्द में रहे मगन।।

जिनबिम्बों की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।
अक्षय शिवपद पाने के शुभ, हमने भाव बनाए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विशद ज्ञान की दिव्य ज्योति का, हो जाए हमको दर्शन।
महामोहतम नाश होय मम, मिट जाए भव की भटकन।।
जिनबिम्बों की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।
अक्षय शिवपद पाने के शुभ, हमने भाव बनाए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

समता रस के परमामृत से, अन्तस् की मिट जाए जलन।
शुक्ल ध्यान की धूप जलाकर, कर्मों का हो जाए शमन।।
जिनबिम्बों की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।
अक्षय शिवपद पाने के शुभ, हमने भाव बनाए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्याभाव लगे सदियों से, उनका हम कर सकें वमन।
मोक्ष महाफल पा जाए हम, करते हैं जिनपद वन्दन।।
जिनबिम्बों की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।
अक्षय शिवपद पाने के शुभ, हमने भाव बनाए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय की बहे त्रिवेणी, मन इन्द्री का करें दमन।
पद अनर्घ पाने हेतु हम, अर्घ्य चढ़ा करते अर्चन।।
जिनबिम्बों की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।
अक्षय शिवपद पाने के शुभ, हमने भाव बनाए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तूप पूजा (दक्षिण दिशा)

(स्थापना)

शुभ भाव से आराधना जो, जीव करते हैं अभी।
वह साधना का फल सुखद, पाकर के हर्षित हो सभी।।
आराधना सम्यक् करें हम, यही अपना ध्येय है।
चेतना के गुण प्रकट हों, सत्य हैं जो ज्ञेय हैं।।

दोहा- पूज्य रहे त्रय लोक में, श्री जिनबिम्ब महान।
दक्षिण नव स्तूप का, करते हम आह्वान।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल छन्द)

प्रासुक करके जल लाए, शुभ धारा तीन कराए।
हम जन्म-जरादि नाशें, अब सम्यक् ज्ञान प्रकाशें।।1।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह सुरभित चंदन लाए, जिन चरणों में चर्चाए।
भव बाधा पूर्ण नशाएँ, फिर शील धर्म प्रगटाएँ।।2।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अक्षय अक्षत लाए, तव चरण चढ़ाने आए।
है अक्षयपद अविकारी, अब आयी मेरी बारी।।3।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

हम पुष्प चढ़ाने आए, मम काम रोग नश जाए।
है यही भावना मेरी, न हो मुक्ति में देरी।।4।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य चढ़ाने आए, न हमको क्षुधा सताए।
हम इससे व्याकुल भारी, अब होवे नाश हमारी।।5।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हम दीप जलाकर लाए, अब मोह-तिमिर नश जाए।
हो जाए ज्ञान उजाला, मुक्ति पद देने वाला।।6।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

है धूप महागुणकारी, कर्मों की नाशनहारी।
अग्नि में खेने लाए, अब शिवपद पाने आए।।7।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम मोक्ष महाफल पाएँ, न भव वन में भटकाएँ।
फल चढ़ा रहे शुभकारी, हो जाए मुक्ति हमारी।।8।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह अनुपम अर्घ्य बनाए, प्रभु यहाँ चढ़ाने लाए।
है पद अनर्घ अविनाशी, पाकर नाशें भव फाँसी।।9।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तूप पूजा (पश्चिम दिशा)

(स्थापना)

तीन लोक में पूज्य रहे हैं, श्री जिनवर के चरण सरोज।
दर्शन पूजन करके प्राणी, तन चेतन में लाते ओज।।
नव स्तूप रहे उत्तर में, उनमें हैं जिनबिम्ब महान।
वीतरागता के लक्षण से, शोभित होते आभावान।।

दोहा- पूज्य रहे त्रय लोक में, श्री जिनबिम्ब महान।
पश्चिम नव स्तूप का, करते हम आह्वान।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(गीता छंद)

निज भावों का निर्मल जल, प्रभु यहाँ चढ़ाने लाए हैं।
जन्म-जरादि रोग नाशकर, तुम सम बनने आए हैं।।
है समवशरण की सप्तम भूमि, नव स्तूपों युक्त महान।
श्री जिनेन्द्र जिनबिम्बों का हम, करते भावसहित गुणगान।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ईर्ष्या की अग्नि में जलकर, मन आकुल व्याकुल हो जाए।
संसार ताप के नाश हेतु, हम चन्दन अर्चा को लाए।।
है समवशरण की सप्तम भूमि, नव स्तूपों युक्त महान।
श्री जिनेन्द्र जिनबिम्बों का हम, करते भावसहित गुणगान।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत विक्षत हुए हम बार-बार, गल्ती कर-कर पछताए हैं।
अब अक्षयपुर का धाम मिले, हम अक्षत धोकर लाए हैं।।
है समवशरण की सप्तम भूमि, नव स्तूपों युक्त महान।
श्री जिनेन्द्र जिनबिम्बों का हम, करते भावसहित गुणगान।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

रागों के शूल अनादि से, हरदम ही चुभते आये हैं।
हम कामवासना नाश हेतु, यह पुष्प चढ़ाने लाए हैं।।

है समवशरण की सप्तम भूमि, नव स्तूपों युक्त महान।
श्री जिनेन्द्र जिनबिम्बों का हम, करते भावसहित गुणगान।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्गों में अमृतपान किया, पर क्षुधा शांत न कर पाए।
हम क्षुधा रोग के नाश हेतु, नैवेद्य चढ़ाने को लाए।।
है समवशरण की सप्तम भूमि, नव स्तूपों युक्त महान।
श्री जिनेन्द्र जिनबिम्बों का हम, करते भावसहित गुणगान।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हम मोह तिमिर में फँसे हुए, निज राह प्राप्त न कर पाए।
अब मोह अंध के नाश हेतु, यह दीप जलाकर के लाए।।
है समवशरण की सप्तम भूमि, नव स्तूपों युक्त महान।
श्री जिनेन्द्र जिनबिम्बों का हम, करते भावसहित गुणगान।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने कैदी बना लिया, जो चारों गतियों में ले जाए।
अब अष्टकर्म के नाश हेतु, यह धूप जलाने हम लाए।।
है समवशरण की सप्तम भूमि, नव स्तूपों युक्त महान।
श्री जिनेन्द्र जिनबिम्बों का हम, करते भावसहित गुणगान।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम पुण्य-पाप के फल पाकर, हर्षित दुःखित होते आए।
अब मोक्ष महाफल पाने को, फल यहाँ चढ़ाने को लाए।।
है समवशरण की सप्तम भूमि, नव स्तूपों युक्त महान।
श्री जिनेन्द्र जिनबिम्बों का हम, करते भावसहित गुणगान।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हे प्रभो ! स्वपद पाने हेतु, हमने कई यत्न लगाए हैं।
अब पद अनर्घ हम पा जाएँ, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।।
है समवशरण की सप्तम भूमि, नव स्तूपों युक्त महान।
श्री जिनेन्द्र जिनबिम्बों का हम, करते भावसहित गुणगान।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तूप पूजा (उत्तर दिशा)

दोहा- पूज्य रहे त्रय लोक में, श्री जिनबिम्ब महान।
विशद हृदय में हम करें, भावसहित आह्वान।।

(स्थापना)

श्री जिन के आशीष से, बने हमारा काम।
शिवपुर में हमको मिले, निज गुण में विश्राम।।
स्तूपों में शोभते, सिद्ध बिम्ब शुभकार।
अर्चा करते भाव से, पाने भव से पार।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाः ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चौपाई)

मिथ्यामल हम धोने आये, निर्मल नीर चढ़ाने लाए।
नव स्तूप रहे मनहारी, अर्चा जिनकी मंगलकारी।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव सन्ताप नशाने आये, चंदन श्रेष्ठ चढ़ाने लाए।
नव स्तूप रहे मनहारी, अर्चा जिनकी मंगलकारी।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पद पाने हम आये, अक्षत धवल चढ़ाने लाए।
नव स्तूप रहे मनहारी, अर्चा जिनकी मंगलकारी ।।3।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों की है महिमा न्यारी, कामबाण विध्वंशनकारी।
नव स्तूप रहे मनहारी, अर्चा जिनकी मंगलकारी ।।4।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हर दिन हमको क्षुधा सताए, नाश हेतु नैवेद्य चढ़ाए।
नव स्तूप रहे मनहारी, अर्चा जिनकी मंगलकारी ।।5।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह अंध से जगत भ्रमाए, नाशनहारी दीप जलाए।
नव स्तूप रहे मनहारी, अर्चा जिनकी मंगलकारी ।।6।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हमको आठों कर्म सताएँ, नाश हेतु यह धूप जलाएँ।
नव स्तूप रहे मनहारी, अर्चा जिनकी मंगलकारी ।।7।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मोक्ष महाफल हम पा जाएँ, फल चरणों में श्रेष्ठ चढ़ाएँ।
नव स्तूप रहे मनहारी, अर्चा जिनकी मंगलकारी ।।8।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य भर लाए थाली, पद अनर्घ को देने वाली।
नव स्तूप रहे मनहारी, अर्चा जिनकी मंगलकारी ।।9।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- गली सातवीं में बने, छत्तिस जिन स्तूप।
गाते हैं जयमाल शुभ, सुर नर मुनि सब भूप।।

(शम्भू छन्द)

श्री जिनेन्द्र के चरण युगल में, वन्दन करते बारम्बार।
हैं आराध्य हमारे अनुपम, तीन लोक में अपरम्पार।।
गणधर मुनियों से भी पूजित, जिनके दोनों चरण कमल।
अविकारी निर्लिप्त जिनेश्वर, होते हैं जो पूर्ण अमल।।1।।
चतुर्दिशा में शोभित होते, छत्तिस शुभ स्तूप महान।
भक्त प्रभु के दर्शन करके, पा लेते हैं सम्यक् ज्ञान।।
जिन दर्शन से दर्शन पाकर, सम्यक् चारित्र पाते हैं।
भक्ति भाव से अर्चा करके, निज सौभाग्य जगाते हैं।।2।।
रत्न और मणियों से निर्मित, पीठ बने हैं अपरम्पार।
जगमग-जगमग चमक रहे हैं, स्तूपों के वन्दनवार।।
जिनवर के तन से ऊँचे शुभ, निर्मित हैं स्तूप महान।
उच्च शिखर पर लगी ध्वजाएँ, फहराकर करती गुणगान।।3।।
हीरा-मोती से निर्मित कई, झालर दिखतीं अपरम्पार।
घंटा तोरण से स्तूपों, की शोभा है मंगलकार।
मंगल द्रव्य जहाँ शोभित हैं, अतिशय शांति की आधार।।
अष्ट द्रव्य से पूजा करते, सुर नर चरणों बारम्बार।।4।।
भेदभाव को भूले प्राणी, सुर नर पशु गति के सब आन।
गणधर और मुनि भी आकर, करते निज आतम का ध्यान।।

कल्पतरु सम जिनकी पूजा, इच्छित फल की दाता है।
तीन लोकवर्ती जीवों को, भवसागर में त्राता है।।5।।
जन्म सफल है आज हमारा, अर्चा का सौभाग्य मिला।
वीतरागमय जैन धर्म का, हृदय हमारे फूल खिला।।
प्रभो ! चन्द्रमा से भी शीतल, हो स्वभाव से आप महान।
सहस सूर्य से भी प्रकाशमय, कहे गये हैं श्री भगवान।।
भवसागर में डूब रहे हैं, हे जिनेन्द्र ! होकर अज्ञान।
चरण-शरण में प्रभु आपके, पाने आये सम्यक् ज्ञान।।
विशद साधना के द्वारा अब, करना है कर्मों का नाश।
भेद ज्ञान के द्वारा हमको, पाना केवलज्ञान प्रकाश।।7।।

(छन्द घत्तानन्द)

जय-जय अविकारी, जिन गुणधारी, मंगलकारी, मनहारी।
जय ब्रह्म बिहारी, शिवपदधारी, अतिशयकारी, अनगारी।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशा सम्बन्धिषट् त्रिंशत्स्तूपस्थ जिनेन्द्रेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- निर्मोही तुम हो प्रभो !, मोह रहे सब जीव।
चरण वन्दना कर सभी, पाते पुण्य अतीव।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

अष्टम श्री मण्डप वर्णन

(दोहा)

चौथा कोट है वज्रमय, कांति रत्न समान।
ऊँचा जिन से चौगुना, आयत भागेक मान।।1।।

ॐ ह्रीं जिन तनुतः चर्तुगुणोतुङ्गेकभागायत-वज्रमय-श्वेत-वर्ण चतुर्थ प्राकार संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिशय कांतिमान हैं, मणिमय चऊ प्रकार।
भेद नहीं दिन-रात का, पञ्च वर्ण मनहार।।2।।

ॐ ह्रीं चतुर्थप्राकारप्रबद्धकान्तिसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महल कंगूरे ध्वज सहित, शोभित है मनहार।
स्वर्णमयी सोपानयुत, कलश चढ़े मनहार।।3।।

ॐ ह्रीं चतुर्थप्राकारवुरज कंगूरा ध्वजासुशोभित विष्ठरविशिष्ट सप्तम-सोपानसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चढ़कर के सोपान से, मिलते हैं प्राकार।
कोट वज्रमय द्वार युत, सोहें विविध प्रकार।।4।।

ॐ ह्रीं द्वारयुक्तचतुर्थप्राकारसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हीरा पन्ना रत्न के, सजे हैं तोरणद्वार।
है चतुर्थ प्राकार की, रचना विविध प्रकार।।5।।

ॐ ह्रीं अनेकरचनायुक्तद्वारसहितचतुर्थप्राकारसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वारपाल द्वारे खड़े, गदा लिए हैं हाथ।
भक्त प्रभु के दर्शकर, चरण झुकाते माथ।।6।।

ॐ ह्रीं द्वारपालसहितद्वारयुक्त चतुर्थप्राकारसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुण्डल पहने कान में, हृदय शोभता हार।
मुकुट लगाए शीश पर, द्वारपाल हैं द्वार।।
अभ्यन्तर वेदी शुभम्, पञ्चम रही महान।
नये वस्त्रमय शोभते, द्वारपाल शुभ जान।।7।।

ॐ ह्रीं द्वारपालयुक्तद्वारसहित पंचमवेदिकायुक्तचतुर्थप्राकार संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्चम वेदी कोष्ठमय, अष्टम गली महान।
उभय पार्श्व अन्तराल में, हो जिनका गुणगान॥8॥

ॐ ह्रीं वज्रप्राकारपंचमवेदिकायाः अष्टमगल्याः भूमौ उभयपार्श्व भूमैः चतुरन्तराल संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम भूमि में गली, जावे बाईं ओर।
द्वादश शाल प्रकोष्ठ शुभ, करते भाव-विभोर॥
घंटों की पंक्ति बनी, ध्वज सोहे मनहार।
नृत्य देव करते वहाँ, ध्वनि सुन बारम्बार॥9॥

ॐ ह्रीं अष्टमभूमौ विविधरचनायुक्तद्वादशशालप्रकोष्ठ संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आग्नेय के कोष्ठ में, मुनिवर का स्थान।
कल्पवासिनी देवियाँ, महिलाएँ भी मान॥10॥

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि कोष्ठत्रये दिगम्बर मुनिकल्पवासिनी मनुष्यनी संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भावन व्यन्तर ज्योतिषी, देवी के स्थान।
दिश नैऋत्य में जानिए, बैठ करें गुणगान॥11॥

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि कोष्ठत्रये ज्योतिष्कव्यन्तरणीभवनवासिनी संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भावन व्यन्तर ज्योतिषी, देवों के स्थान।
वायव्य दिश में जानिए, बैठ करें गुणगान॥12॥

ॐ ह्रीं वायव्यदिशि कोष्ठत्रये ज्योतिष्कभवनव्यन्तरसुरवास संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

दिश ईशान में कोष्ठ भाई, वैमानिक सुर के सुखदाई।
मानव पशुओं के भी जानो, सब जिनवाणी सुनते मानो॥13॥

ॐ ह्रीं ईशानदिशि कोष्ठत्रये कल्पोपपन्नदेवनरतिर्यंचसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौथा कोट वज्रमय जानो, अड़तालिसवें भाग प्रमाणो।
चौबिस भाग वेदिका मानो, वलय व्यास दो तरफ बखानो॥14॥

ॐ ह्रीं वज्रशालाष्टचत्वारिंशद्भागे वज्रमयचतुर्थसालतः चतुर्विंशति भागवेदिका संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबिस भाग भूमि के जानो, सहस चार शुभ धनुष प्रमाणो।
उच्च धनुष आठ है सूची, सोलह पैढ़ी बनी है ऊँची॥15॥

ॐ ह्रीं अष्टचापोच्चसूचीयुक्त-चतुःसहस्रचापप्रथमपीठसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम पीठ में पीढ़ी भाई, सोलह धनुष आठ ऊँचाई।
प्रथम पीठ शोभा जो पाए, यक्ष खड़े हैं भक्ति बढ़ाए॥16॥

ॐ ह्रीं बद्धकर-मस्तकस्थधर्मचक्र-यक्षयुक्त प्रथमपीठसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मचक्र जो सिर पर धारे, हाथ जोड़कर प्रभु के द्वारे।
आरे सहस एक वसु गाये, रचना पहियाकार बताए॥17॥

ॐ ह्रीं विचित्रधर्मचक्रसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम पीठी पर रहे निराले, जिन भक्ति में हैं मतवाले।
अष्ट द्रव्य लेकर के भाई, शोभित होते हैं सुखदाई॥18॥

ॐ ह्रीं चतुर्दिशि वसुमंगलद्रव्यधर्मचक्रसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रादि सब गुण के धारी, पूजा करते हैं मनहारी।
उत्तर सिवावन से जो आवें, कोठों में स्नान बनावें।।19।।

ॐ ह्रीं जिनपूजाकृत्त्वाप्रथमपीठे निजकोष्ठस्थितिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय पीठ रही मनहारी, स्वर्णमयी अति विस्मयकारी।
रचना विविध रही सुखदायी, इन्द्र करें पूजा नित भाई।।20।।

ॐ ह्रीं द्वितीयपीठे इन्द्रगत्यभावातिशयव्यवस्था संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूची धनु पच्चिस सौ जानो, पीठ दूसरी को पहिचानो।
चार धनुष ऊँचा है भाई, आठ सिवान बने सुखदाई।।21।।

ॐ ह्रीं सुवर्णमयोच्चद्वितीयपीठ संयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परधि पीठ दूजी पर भाई, खम्ब अनेक बने हैं भाई।
बने सुराईदार निराले, पहल रहे सुन्दर शुभ आले।।22।।

ॐ ह्रीं विचित्रविविधरचनायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचनमय खम्भे मनहारी, पञ्च वर्ण रत्नों के भारी।
मगरोले सोहें अधिकारी, शिखर सहित शोभित मनहारी।।23।।

ॐ ह्रीं स्तम्भशिखरामरगोलायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मण्डप की शोभा न्यारी, मोती झालरमय मनहारी।
श्रेष्ठ कलश हैं तुंग ध्वजाएँ, रचनाकर सुर अति सुख पाएँ।।24।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तश्रीमण्डपसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शम्भू छन्द)

श्री जिनेन्द्र के तन से ऊँचे, वृक्ष अशोक रहे मनहार।
बारह गुणे श्री मण्डप से, विदिशा में शोभित हैं चार।।25।।

ॐ ह्रीं जिनतनुतः द्वादशगुणोच्चाशोकवृक्षसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तरु अशोक में हीरा की जड़, स्वर्णमयी शाखाएँ जान।
पत्र रहे पन्ना के अनुपम, पुष्प लाल हैं अतिशयवान।।
श्रेष्ठ मनोहर फल हैं अनुपम, जिनका वर्णन कठिन रहा।
वन्दन करते भव्य जीव सब, जिन चरणों में नित्य अहा।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीमण्डपोपरि विविधरचनायुक्त अशोकवृक्षशोभा संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पीठ दूसरी अष्ट दिशा में, आठ ध्वजाएँ मंगलकार।
हाथी सिंह चक्र नभ माला, गरुण सरोज वृषभ मनहार।।
चिह्न पताकाओं में शोभित, होते हैं अति श्रेष्ठ महान।
मंगल द्रव्य अष्ट अति सोहें, धूप सुघट है महिमावान।।27।।

ॐ ह्रीं अनेकरचनायुक्तद्वितीयपीठ संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय पीठ की महिमा अनुपम, सहस धनुष की मंगलकार।
सूची चार धनुष की ऊँची, समवशरण में है मनहार।।28।।

ॐ ह्रीं एकसहस्त्रधनुरायत-चतुर्धनुरुच्च-तृतीयपीठसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट सिवान रत्न से मण्डित, तृतीय पीठ पे मंगलकार।
श्रेष्ठ कटहरा से शोभित हैं, विस्मयकारी अति मनहार।।29।।

ॐ ह्रीं महाशोभायुक्ततृतीयपीठ संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन पीठिका के ऊपर शुभ, गंध कुटी सोहे मनहार।
गंध कुटी चौकोर निराली, जिसकी महिमा अपरम्पार।।30।।

ॐ ह्रीं पीठत्रयोपरि समचतुष्कोणगन्धकुटीसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वृषभनाथ की गंधकुटी शुभ, वृषभनाथ की रही महान।
इतनी ही चौड़ाई जानो, नौ सौ धनुष उत्तुंग प्रधान।।31।।

ॐ ह्रीं गन्धकुटीसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रमशः हीन तेइस जिनवर की, गंधकुटी भी रही विशेष।
जिसके ऊपर शोभा पाते, मंगलकारी सब तीर्थेश।।32।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशति जिनेन्द्राणां क्रमहीनविस्तारापन्नगन्धकुटी संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधकुटी पर कमल शोभता, सिंहासन भी रहा महान।
उसके ऊपर अधर प्रभु जी, का होता है शुभ स्थान।।33।।

ॐ ह्रीं वचनागोचरगन्धकुटीसिंहासनसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्वेत स्फटिक मणि के पावन, रत्न जड़ित हैं सिंहासन।
रत्नमाल से शोभित हैं जो, मंगलमय मंगल पावन।।34।।

ॐ ह्रीं विविधरत्नमयगन्धकुटीसिंहासनसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंहासन पर कमल शोभता, सहस्र पत्र का अति पावन।
लाल वर्ण का अतिशयकारी, दिखता है जो मन भावन।।35।।

ॐ ह्रीं सहस्रपत्रयुक्तसुवर्णकमलविशिष्ठसिंहासन संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कमल बीच में रही कर्णिका, चऊ अंगुल ऊँचे शुभ मान।
तीर्थंकर जिन शोभित होते, सौ-सौ इन्द्र करें गुणगान।।

अंतरिक्ष में अधर विराजे, समवशरण में श्री भगवान।
सुर-नर-मुनि गण भक्ति भाव से, करते हैं शुभ मंगलगान।।36।।

ॐ ह्रीं कमलोपरिचतुरंगुलान्तरीक्षजिनसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- यथा कांति जिन की रही, भामण्डल भी मान।
तीर्थंकर जिनदेव की, ऊँचाई अब जान।।
क्रमशः आदिनाथ की, धनुष पाँच सौ जान।
साढ़े चार फिर चार शुभ, साढ़े तीन की मान।।37।।

ॐ ह्रीं जिनतनुसमानकान्तियुक्तभामण्डलसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन ढ़ाई दो डेढ़ इक, धनुष रहे हैं खास।
नब्बे अस्सी धनुष अरु, सत्तर साठ पचास।।
पैंतालिस चालिस तथा, पैंतिस तीस पच्चीस।
बीस पञ्चदश दश, धनुष नेमि हुए ऋशीष।।
पार्श्वनाथ नौ हाथ अरु, सात हाथ के वीर।
अवगाहन प्रभु का रहा, पाए भव का तीर।।38।।

ॐ ह्रीं एतत्पद्योक्तजिनकायोच्चताशोभासंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोट वेदि चउ पञ्च शुभ, जिन के तन से श्रेष्ठ।
उच्च चौगुने जानिए, मंगलमयी यथेष्ठ।।
मंदिर पर्वत वेदिका, क्रीड़ा के स्थान।
द्वार कोट स्तूप शुभ, कल्प वृक्ष पहिचान।।
मानस्तम्भ सिद्धार्थ तरु, नृत्यशाल भी जान।
उच्च कोष्ठ मण्डप सभी, द्वादश गुणे महान।।39।।

ॐ ह्रीं समवशरणरचनातुङ्गताप्रमाणसंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मण्डप भूमि पूजा

(स्थापना)

समवशरण में अष्टम भूमि, श्री मण्डप है जिसका नाम।
द्वादश सभा जहाँ लगती है, जिन पद करते सभी प्रणाम।।
विशद हृदय के कमलासन पर, करते हम प्रभु का आह्वान।
भक्ति भाव से जग के प्राणी, करते हैं जिनका गुणगान।।
श्री जिनेन्द्र के समवशरण में, है समानता का अधिकार।
यही भावना भाते हैं हम, करें अर्चना बारम्बार।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(गीता छन्द)

अष्ट कर्म से मलिन रहे हम, नहीं हुआ कर्मों का क्षय।
निर्मल जल यह अर्पित करके, जन्म-मृत्यु पर पाएँ जय।।
अजर-अमर अविचल अविनाशी, परमशुद्ध मेरा गुण धाम।
वह पद पाने हेतु करते, जिनपद बारम्बार प्रणाम।।1।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

पर भावों में उलझ रहे हम, नहीं हुआ मेरा उद्धार।
शीतल चंदन अर्पित करके, पा जाएँ इस भव से पार।।
अजर-अमर अविचल अविनाशी, परमशुद्ध मेरा गुण धाम।
वह पद पाने हेतु करते, जिनपद बारम्बार प्रणाम।।2।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानानन्द स्वभावी आतम, मैं अक्षय गुण का भण्डार।
अक्षय अक्षत चढ़ा रहे हम, मोक्ष महल का पाने द्वार।।
अजर-अमर अविचल अविनाशी, परमशुद्ध मेरा गुण धाम।
वह पद पाने हेतु करते, जिनपद बारम्बार प्रणाम।।3।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम व्यथा से घायल होकर, सारे जग में भटकाए।
पुष्प समर्पित करते हैं हम, काम नाश करने आए।।
अजर-अमर अविचल अविनाशी, परमशुद्ध मेरा गुण धाम।
वह पद पाने हेतु करते, जिनपद बारम्बार प्रणाम।।4।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा रोग ने हमें सताया, तृप्त नहीं हो पाया मन।
ताजे यह नैवेद्य चढ़ाकर, सफल करें अपना जीवन।।
अजर-अमर अविचल अविनाशी, परमशुद्ध मेरा गुण धाम।
वह पद पाने हेतु करते, जिनपद बारम्बार प्रणाम।।5।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह-तिमिर मेरे सदियों से, अन्तर में छाया घनघोर।
घृत का दीप समर्पित करते, पाने निज गुण भाव-विभोर।।
अजर-अमर अविचल अविनाशी, परमशुद्ध मेरा गुण धाम।
वह पद पाने हेतु करते, जिनपद बारम्बार प्रणाम।।6।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म ने हमें सताया, पाया जग में बहु संताप।
श्रेष्ठ सुगन्धित धूप जलाते, मिट जाए कर्मों का ताप।।
अजर-अमर अविचल अविनाशी, परमशुद्ध मेरा गुण धाम।
वह पद पाने हेतु करते, जिनपद बारम्बार प्रणाम।।7।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सहजानन्द स्वस्थ आत्मा, शिवफल का जो है स्वामी।
ताजे यह फल चढ़ा रहे हम, बने मोक्ष के अनुगामी।।
अजर-अमर अविचल अविनाशी, परमशुद्ध मेरा गुण धाम।
वह पद पाने हेतु करते, जिनपद बारम्बार प्रणाम।।8।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट गुणों के स्वामी होकर, भटक रहे सारा संसार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, पाना है भवसागर पार।।
अजर-अमर अविचल अविनाशी, परमशुद्ध मेरा गुण धाम।
वह पद पाने हेतु करते, जिनपद बारम्बार प्रणाम।।9।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीस तीर्थंकरों के अर्घ्य

दोहा- चौबीसों जिनराज के, चढ़ा रहे हम अर्घ्य।
पुष्पाञ्जलि करते प्रथम, पाने सुखद अनर्घ।।

(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(सोरठा)

मरुदेवी के लाल, नाभिराय के सुत कहे।
चरण झुकाएँ भाल, ऋषभनाथ के चरण में।।1।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजितनाथ भगवान, कर्मशत्रु को जीतकर।
जग में हुए महान्, जिन पद वंदन हम करें।।2।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अश्व चिह्न पहिचान, संभवनाथ जिनेन्द्र की।
करें विशद गुणगान, जिन गुण पाने के लिए।।3।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनंदन जिनदेव, चरण वंदना हम करें।
विनती करें सदैव, चरण-शरण हमको मिले।।4।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अभिनंदननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमतिनाथ पद माथ, झुका रहे हम भाव से।
मुक्ति पथ में साथ, दीजे हमको जिन प्रभो !।।5।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नृप धारण के लाल, पद्मप्रभ हैं पद्म सम।
वन्दन करें त्रिकाल, तव पद पाने के लिए।।6।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुपार्श्व के पाद, स्वस्तिक लक्षण शोभता।
रहे सभी को याद, जिनवर की महिमा अगम।।7।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कान्ति चन्द्र समान, चन्द्र चिह्न जिनका परम।
इन्द्र करें गुणगान, भक्ति में तल्लीन हो।।8।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पदंत ने अंत, कीन्हा है संसार का।
आप हुए जयवंत, सद्गुण के सरवर बने।।9।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

शीतलनाथ जिनेन्द्र, शीलव्रतों को पाए हैं।
पूजें इन्द्र नरेन्द्र, मन में हर्ष मनाए हैं।।10।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

होय कर्म का नाश, जिन श्रेयांस की भक्ति से।
आतम ज्ञान प्रकाश, होता है भवि जीव का।।11।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

वासुपूज्य भगवान, तीन लोक में पूज्य हैं।
शत्-शत् करें प्रणाम, पूजा करके भाव से।।12।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

विमलनाथ का विमल ज्ञान है, द्रव्य चराचर भाषी।
कर्म नाशकर शिवपुर पहुँचे, पद पाया अविनाशी।।13।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

(छन्द-जोगीरासा)

अनंतनाथ जिनवर ने सारे, घाती कर्म विनाशे।
ज्ञान अनंतानंत प्राप्त कर, लोकालोक प्रकाशे।।14।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

धर्मनाथ भगवान लोक में, विशद धर्म के धारी।
सर्वलोक में जिनका दर्शन, होता मंगलकारी।।15।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

कामदेव चक्रीपद पाया, तीर्थंकर पद धारा।
शांतिनाथ है तीन लोक में, पावन नाम तुम्हारा।।16।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

कुंथुनाथ गुणों के सागर, सर्व गुणों के दाता।
तीन लोकवर्ती जीवों के, कुंथुनाथ हैं त्राता।।17।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

अष्ट कर्म का नाश किए प्रभु, आठ गुणों को पाए।
अरहनाथ भगवान जगत् में, सबके हृदय समाए।।18।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

कर्मरूप मल्लों की सेना, जिनके आगे हारी।
मल्लिनाथ भगवान आपकी, दुनियाँ बनी पुजारी।।19।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मुनिसुव्रत ने मुनि व्रतों को, अपने हृदय सजाया।
मोक्षमार्ग के राही जिनवर, केवलज्ञान जगाया।।20।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मिथिलापुर नगरी के राजा, विजयसेन कहलाए।
जन्म प्राप्त कर नमिनाथ ने, सबके भाग्य जगाए।।21।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

पशुओं की पीड़ा को लखकर, मन में करुणा जागी।
नेमिनाथ जग की माया तज, क्षण में बने विरागी।।22।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

कर उपसर्ग पार्श्व के ऊपर, हार कमठ ने मानी।
ध्यान अग्नि से कर्म जलाए, बन गये केवलज्ञानी।।23।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

निजपद विजय प्राप्त करते जो, महावीर कहलाते।
ऐसे वीर प्रभु के चरणों, सादर शीश झुकाते।।24।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तीर्थंकर चौबीस हुए हैं, घाती कर्म विनाशी।
प्रभु ने सिद्ध सुपद को पाया, मंगलमय अविनाशी।।25।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- समवशरण राजित प्रभो, श्री मण्डप सुखदाय।
गाएँ शुभ जयमालिका, तुष्टि करो जिनराय।।

(चौपाई)

जय-जय तीर्थंकर शिवकारी, धनद रचित मंडप दुखहारी।
जय-जय मानस्तम्भ मनोहर, श्री मण्डप त्रिभुवन में सुन्दर।।

द्वादश कोष्ठ सहित मनहारी, मण्डप सोहे मंगलकारी।
शुभ अभीक्ष्ण महानस मनहर, प्रथम कोष्ठ में मुनिवर गणधर।।
द्वितीय कल्प वासिनी देवी, जो हैं जिनवर के पद सेवी।
तृतीय कोष्ठ में हैं आर्यिकाएँ, फिर ज्योतिष्कों की ललनाएँ।।
पंचम में व्यंतर महिलाएँ, षष्ठम् भवनवासी ललनाएँ।
भवनवासी सप्तम में जानो, अष्टम में व्यंतर पहिचानो।।
नवम् कोष्ठ ज्योतिष का भाई, दशम् कोष्ठ वैमानिक पाई।
ग्यारह में नर चक्री जावें, द्वादशवाँ तिर्यंच भी पावें।।
द्वादश सभा कही मनहारी, श्री मण्डप भूमि है प्यारी।
तीन लोक के प्रभु अधिकारी, जय-जय जिनवर तुम अविकारी।।
जय-जय मण्डप भू हितकारी, तव दर्शन भवि कल्मषहारी।
मंडप भू महिमा नित न्यारी, समवशरण भवि क्लेश निवारी।।
स्तुतियाँ गणधर कई गावें, जिनपूजा कर हर्ष मनावें।
जय-जय श्री मण्डप को ध्यावें, कर्म कलिमा दूर भगावें।।
श्री मण्डप की आरती गावें, सुख संपद वर शिव को पावें।
हम भी प्रभु को पूज रचाएँ, अनुक्रम से शिवपद को पाएँ।।
यही भावना एक हमारी, पूर्ण करो तुम हे त्रिपुरारी!
जग के तुम त्राता कहलाए, अतः द्वार हम तुमरे आए।।
पूजा का फल हम पाएँगे, निश्चय से शिवपुर जाएँगे।
भव का भ्रमण मिटेगा सारा, लक्ष्य यही है एक हमारा।।

सोरठा- पूजे अर्घ्य चढ़ाय, श्री मण्डप जिनराज को।
सहजानन्द लहाय, शिवपुर वास करें सदा।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थित चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा- श्री मण्डप भू में प्रभो !, शोभित हैं जिनराज।
वन्दन है शुभ भाव से, जिनपद में मम आज।।

।। शांतये शांतिधारा (दिव्य पुष्पाञ्जलिं) ।।

श्री गंधकुटी पूजा

(स्थापना)

गंध कुटी के मध्य में अनुपम, कमल शोभता मंगलकार।
सिंहासन पर अधर प्रभु की, महिमा जग में अपरम्पार।।
प्रतिहार्य से प्रभु शोभते, अतिशय होते विविध प्रकार।
भव्य जीव जिन दर्श प्राप्त कर, अनुपम पाते सौख्य अपार।।

दोहा- श्री जिनेन्द्र की लोक में, महिमा रही महान।
हृदय कमल में जिन प्रभु, का करते आह्वान।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटी समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटी समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटी समूह ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(गीता छन्द)

हम प्रासुक करके जल निर्मल, प्रभु चरण चढ़ाने लाए हैं।
जन्मादि जरा के रोगों से, छुटकारा पाने आए हैं।।
हम अष्ट कर्म का नाश करें, हे नाथ ! हमें दो यह आशीष।
हमको प्रभु भव से पार करो, हम चरणों झुका रहे हैं शीश।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटीभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम शीतल चंदन घिस करके, हे नाथ ! चढ़ाने लाए हैं।
भव का संताप नशाने को, तव चरणों में सिर नाए हैं।।

हम अष्टकर्म का नाश करें, हे नाथ ! हमें दो यह आशीष।
हमको प्रभु भव से पार करो, हम चरणों झुका रहे हैं शीश ।।2 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटीभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह अक्षय अक्षत हैं अनुपम, हम यहाँ चढ़ाने लाए हैं।
जो है अखण्ड अविनाशी पद, वह पद पाने हम आए हैं।
हम अष्टकर्म का नाश करें, हे नाथ ! हमें दो यह आशीष।
हमको प्रभु भव से पार करो, हम चरणों झुका रहे हैं शीश ।।3 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटीभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

यह भाँति-भाँति के मनहारी, शुभ पुष्प चढ़ाने लाए हैं।
हम कामबाण की बाधा को, प्रभु पूर्ण नशाने आए हैं।।
हम अष्टकर्म का नाश करें, हे नाथ ! हमें दो यह आशीष।
हमको प्रभु भव से पार करो, हम चरणों झुका रहे हैं शीश ।।4 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटीभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य बनाकर के मनहर, हम श्रेष्ठ चढ़ाने लाए हैं।
अब क्षुधा व्याधि के नाश हेतु, प्रभु चरण-शरण में आए हैं।।
हम अष्टकर्म का नाश करें, हे नाथ ! हमें दो यह आशीष।
हमको प्रभु भव से पार करो, हम चरणों झुका रहे हैं शीश ।।5 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटीभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह घृत का दीप बनाकर के, प्रभु यहाँ जलाकर लाए हैं।
छाया अंतर में घोर तिमिर, हम उसे नशाने आए हैं।।
हम अष्टकर्म का नाश करें, हे नाथ ! हमें दो यह आशीष।
हमको प्रभु भव से पार करो, हम चरणों झुका रहे हैं शीश ।।6 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटीभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

यह धूप बनाकर के ताजी, प्रभु यहाँ जलाने लाए हैं।
हों नष्ट कर्म यह अष्ट मेरे, हम भक्ति करने आए हैं।।
हम अष्टकर्म का नाश करें, हे नाथ ! हमें दो यह आशीष।
हमको प्रभु भव से पार करो, हम चरणों झुका रहे हैं शीश ।।7 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटीभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

यह सरस पक्व फल लिए नाथ !, हम यहाँ चढ़ाने लाए हैं।
है मोक्ष महाफल सर्वोत्तम, वह फल पाने को आए हैं।।
हम मोक्ष महाफल प्राप्त करें, हे नाथ ! हमें दो यह आशीष।
हमको प्रभु भव से पार करो, हम चरणों झुका रहे हैं शीश ।।8 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटीभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अष्ट गुणों की प्राप्ति हेतु, यह अर्घ्य बनाकर लाए हैं।
प्रभु भव बंधन से छूट सकें, अतएव शरण में आए हैं।।
हम अष्टकर्म का नाश करें, हे नाथ ! हमें दो यह आशीष।
हमको प्रभु भव से पार करो, हम चरणों झुका रहे हैं शीश ।।9 ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंधकुटीभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीस तीर्थंकरों के अर्घ्य

दोहा- विशद ज्ञान का तेज है, जग में अपरम्पार।
पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, पाने सौख्य अपार।।

(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

जल चन्दन अक्षत पुष्पादि, चरुवर शुभ दीप जलाते हैं।
धूप और फल साथ मिलाकर, अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।।
विशद भाव से आदिनाथ पद, सादर शीश झुकाते हैं।
सुख शांति सौभाग्य बढ़े प्रभु, यही भावना भाते हैं।।1 ।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभदेवजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन आदि अष्ट द्रव्य, हम श्रेष्ठ चढ़ाने लाए हैं।
हो पद अनर्घ शुभ प्राप्त हमें, हम चरण-शरण में आए हैं।।
अजितनाथ जी साथ निभाओ, मोक्ष महल में जाने का।
दो आशीष हमें हे भगवन् !, मुक्ति वधु को पाने का।।2।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म विशद है मंगलकारी, हम भी उसके हैं अधिकारी।
पद अनर्घ पाने को आए, अर्घ्य चढ़ाने को हम लाए।।
प्रभु हो तीन लोक के त्राता, भवि जीवों को ज्ञान प्रदाता।
तीर्थंकर पदवी के धारी, सम्भव जिनपद ढोक हमारी।।3।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बन्धु सब मिल करो अर्चना, अभिनन्दन भगवान की।
प्रगटित होती जिन पूजा से, ज्योति केवलज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्-वन्दे जिनवरम्
लोकालोक अनादि शाश्वत, परद्रव्यों से युक्त कहा।
सप्त तत्त्व अरु पुण्य पाप की, श्रद्धा के बिन बना रहा।।
पद अनर्घ देने वाली है, अर्चा जिन भगवान की।
प्रगटित होती जिन पूजा से, ज्योति केवलज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्-वन्दे जिनवरम्।।4।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्ध शिला पर वास हेतु प्रभु, अष्ट कर्म का नाश किए।
क्षायिक ज्ञान प्रकट कर अनुपम, पद अनर्घ में वास किए।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बनाकर, करते हम सम्यक् अर्चन।
पर अनर्घ की प्राप्ति हेतु हम, करते हैं शत्-शत् वन्दन।।5।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रासुक नीर सुगंध सुअक्षत, पुष्प चरु ले दीप जलाय।
धूप और फल अष्ट द्रव्य ले, श्री जिनवर के चरण चढ़ाय।।
रवि अरिष्ट ग्रह की शांति को, पद्मप्रभ पद शीश झुकाय।
हे करुणाकर ! भव दुःखहर्ता, चरण पूजते मन-वच-काय।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार सुखों की चाहत में, मन मेरा बहु ललचाया है।
हम भ्रमर बने भटके दर-दर, पर पद अनर्घ न पाया है।।
अब प्राप्त हमें हो पद अनर्घ, हम यही भावना भाते हैं।
अत एव चरण में जिन सुपार्श्व, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध आदिक द्रव्य वसु ले, अर्घ्य शुभम् बनाए हैं।
शाश्वत सुखों की प्राप्ति हेतु, थाल भरकर लाए हैं।।
श्री चन्द्र प्रभु के चरण की, शुभ वन्दना से हो चमन।
हम सिर झुकाकर विशद पद में, कर रहे शत्-शत् नमन।।8।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल जल सम शुद्ध हृदय, चंदन सम मनहर शीतलता।
अक्षत सम अक्षय भाव रहे, है सुमन समान सुकोमलता।।
है मिष्ठ वचन मोदक जैसे, दीपक समज्ञान प्रकाश रहा।
यश धूप समान सुविकसित कर, श्रीफल जैसे सुफल अहा।
अपने मन के शुभ भावों का, यह चरणों अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हम परम पूज्य जिन पुष्पदंत को, विशद भाव से ध्याते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य ले मंगलकार, अर्घ्य चढ़ाए अपरम्पार।
परम सुखकार, प्रभु पद वन्दन बारम्बार।।
पद अनर्घ हमको मिल जाय, रत्नत्रय पा मुक्ति पाय।
परम सुखकार, प्रभु पद वन्दन बारम्बार।।10।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु पद अनर्घ को पाये, हम अनुपम थाल भराये।
यह आठों द्रव्य मिलाते, प्रभु चरणों श्रेष्ठ चढ़ाते।।
जय-जय श्रेयांस अविकारी, हम पूजा करें तुम्हारी।
हम भाव सहित गुण गाते, चरणों में शीश झुकाते।।11।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग में सद् असद् द्रव्य जो हैं, उन सबके अर्घ्य बताए हैं।
अब पद अनर्घ की प्राप्ति हेतु, हम अर्घ्य बनाकर लाए हैं।।

अब पद अनर्घ को पा जाएँ, हे वासुपूज्य ! जिनवर स्वामी।
हमको प्रभु ऐसी शक्ति दो, बन जाएँ हम अन्तर्यामी।।12।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाएँ हम सुपद अनर्घ, अर्घ्य देने लाए।
होवे सिद्धों में वास, भावना यह भाए।।
हे विमलनाथ ! भगवान, विमल गुण के धारी।
करुणा प्रभु करो प्रदान, हे करुणाकारी।।13।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन आदि मिलाय, अर्घ्य बनाते हैं।
पद पाने हेतु अनर्घ, श्रेष्ठ चढ़ाते हैं।।
जय-जय अनन्त भगवान, जग के त्राता हो।
भव्यों के तुम हे नाथ !, भाग्य विधाता हो।।14।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु आठों द्रव्य मिलाए, यह पावन अर्घ्य बनाए।
हम पद अनर्घ पा जाएँ, भव सागर से तिर जाएँ।।
जय धर्मनाथ जिन स्वामी, तुम हो प्रभु अन्तर्यामी।
तव चरण-शरण को पाते, प्रभु चरणों शीश झुकाते।।15।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह अष्ट द्रव्य हम लाए हैं, हमने शुभ अर्घ्य बनाया है।
पाने अनर्घ पद अतिशय प्रभु, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाया है।।

हमको डर लगता कर्मों से, हे नाथ ! दूर मेरा भय हो।
हम अर्घ्य चढ़ाते भाव सहित, मम जीवन भी शांतिमय हो।।16।।

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन अक्षत पुष्पादि, चरुवर शुभ दीप जलाते हैं।
धूप और फल साथ मिलाकर, अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।।
कुन्थुनाथ की अर्चा करके, प्राणी सब हर्षाते हैं।
विनय भाव से वन्दन करके, सादर शीश झुकाते हैं।।17।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिलाके सभी द्रव्य का अर्घ्य लाए।
परम श्रेष्ठ शाश्वत सुपद पाने आए।।
प्रभु आपके हम गुणगान गाते।
अरहनाथ तव पाद में सर झुकाते।।18।।

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार वास दुखकारी है, हम इससे अब घबराए हैं।
पाने अनर्घ पद नाथ परम, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।।
श्री मल्लिनाथ जिनवर का दर्शन, जग में मंगलकारी है।
विशद भाव से प्रभु चरणों में, अतिशय ढोक हमारी है।।19।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेद ज्ञान का सूर्य उदयकर, अविनाशी पद प्राप्त करें।
अष्ट द्रव्य से पूजा करके, उर अनर्घ पद व्याप्त करें।।

शनि अरिष्ट ग्रह शांति हेतु, पद पंकज में आए हैं।
मुनिसुव्रत जिनवर के चरणों, सादर शीश झुकाए हैं।।20।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अवगुण को ही नाथ सदा, निज के गुण कहते आए हैं।
अब पद अनर्घ की प्राप्ति हेतु, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।।
हे नमिनाथ ! जिनवर स्वामी, मेरी विनती स्वीकार करो।
प्रभु सरस भावना के द्वारा, मेरे मन को हे नाथ ! भरो।।21।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अविचल अनर्घ पद पाने का, प्रभु हमने भाव जगाया है।
अत एव प्रभु वसु द्रव्यों का, अनुपम यह अर्घ्य बनाया है।।
दो पद अनर्घ हमको स्वामी, यह अर्घ्य संजोकर लाए हैं।
राहु अरिष्ट ग्रह शांति हेतु प्रभु, चरणों शीश झुकाए हैं।।22।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल आदिक अष्ट द्रव्य से, अर्घ समर्पित करते हैं।
पूजन करके पार्श्वनाथ की, कोष पुण्य से भरते हैं।।
विघ्न विनाशक पार्श्व प्रभु की, पूजन आज रचाते हैं।
पद पंकज में विशद भाव से, अपना शीश झुकाते हैं।।23।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ठम वसुधा पाने के यह, अर्घ्य मनोहर लाए हैं।
निज अनर्घ पद पाने हेतु, चरण शरण में आए हैं।।
अर्हत् सिद्ध सूरी पाठक अरु, सर्व साधु को ध्याते हैं।
हों पंच परम पद प्राप्त हमें, हम सादर शीश झुकाते हैं ।।24।।

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसों जिनराज ने, पाया शिव का धाम।
अष्ट द्रव्य से पूजकर, करते चरण प्रणाम।।25।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति जिन समवशरण स्थित तृतिय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- झलके आतम ज्ञान में, तीनों लोक त्रिकाल।
गंधकुटी में जिन प्रभु, की गाते जयमाल।।

(शम्भू छन्द)

समवशरण के मध्य शोभती, गंधकुटी अतिशय मनहार।
तीर्थंकर जिन अधर विराजे, जिनको वन्दन बारम्बार।।
जिन चरणों में स्वर्ग लोक के, इन्द्र सभी मिल आते हैं।
हाव-भाव से प्रेरित होकर, समवशरण बनवाते हैं।।
चतुर्दिशा में पुष्पमालिका, आकर श्रेष्ठ सजाते हैं।
स्वर्ण रचित रत्नों से सज्जित, कलशादि धवल लगाते हैं।।
वीतराग का भाव लिए शुभ, कमल शोभता अपरम्पार।
रत्नजड़ित सिंहासन जिस पर, शोभित होता है मनहार।।

मंगल द्रव्य अष्ट शोभित हैं, ध्वज फहराएँ चारों ओर।
धर्म चक्र ले खड़े यक्ष शुभ, भक्तिरत हैं भाव-विभोर।।
दिव्य-ध्वनि खिरती जिन प्रभु की, गणधर जिसको झेल रहे।
भव्य जीव सुनकर हर्षाते, उर में धर्म का स्रोत बहे।।
झूम-झूमकर इन्द्र नाचते, अर्चा करते बारम्बार।
भामण्डल शोभित होता है, प्रभु के पीछे अपरम्पार।।
शोक हरण करता अशोक तरु, चलती शीतल मंद बयार।
तीन छत्र शोभित हैं उस पर, दिखते हैं जो विस्मयकार।।
अदया का कोई नाम नहीं है, दयावान हों सारे जीव।
श्रद्धावान सभी होकर के, पुण्य कमाते वहाँ अतीव।।
भेदज्ञान जागृत करते हैं, पाते हैं प्राणी श्रद्धान।
संयम को भी धारण करते, दर्शनकर कई जीव महान।।
वीतराग मुद्रा को लखकर, हो जाता है मोह विनाश।
आतम के कल्याण हेतु सब, पाते प्राणी ज्ञान प्रकाश।।
श्री जिन प्रभो कर्म के नाशी, सत्य सूर्य प्रगटाते हैं।
फैला मोह-तिमिर जग में जो, उसको प्रभु नशाते हैं।।
गंधकुटी में जिन दर्शन कर, निज का दर्शन पाना है।
रत्नत्रय निधि पाकर के शुभ, सिद्धशिला पर जाना है।।

दोहा- गंधकुटी में जिन प्रभो !, दर्शन दें चउँ ओर।
भव्य जीव जिन दर्शकर, होते भाव-विभोर।।

ॐ ह्रीं तृतीय पीठो गंधकुटी स्थित चतुर्विंशति तीर्थंकर अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- शुभाशीष हमको मिले, धरें आशिका शीश।
भवसागर से तिर सकें, हे त्रिभुवनपति ईश।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

चक्रवती कामदेव बलभद्र आदिकृत पूजा

(स्थापना)

चक्रवर्ति बलभद्र आदि सब, महापुरुष चरणों आते।
भक्ति भाव से करें वन्दना, श्री जिनेन्द्र के गुण गाते।।
समवशरण का वैभव लखकर, नतमस्तक हो जाते हैं।
भक्तिपूर्वक अर्चा करके, सादर शीश झुकाते हैं।।

दोहा- हृदय कमल में हे प्रभो !, करते हम आह्वान।
करुणा करके आइये, तीर्थंकर भगवान।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्र ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(गीता छन्द)

अगणित सागर का जल पीकर, प्यास बुझा न पाए हैं।
अनुपम सुखमय निर्मल शीतल, जल पीने हम आए हैं।।
चक्रवर्ति बलभद्र भूप कई, जिन अर्चा करने आते।
भक्ति भाव से गुण गाकर के, जिनपद में वह सिर नाते।।1।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संतापों में पर भावों के, उलझ-उलझ दुख पाए हैं।
भव संताप नाश सुख पाने, चन्दन घिसकर लाए हैं।
चक्रवर्ति बलभद्र भूप कई, जिन अर्चा करने आते।
भक्ति भाव से गुण गाकर के, जिनपद में वह सिर नाते।।2।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

निज स्वरूप को भूल रहे, पर ममता में अटकाए हैं।
अक्षय अनुपम पद पाने यह, अक्षत धवल चढ़ाए हैं।।
चक्रवर्ति बलभद्र भूप कई, जिन अर्चा करने आते।
भक्ति भाव से गुण गाकर के, जिनपद में वह सिर नाते।।3।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

हम पर द्रव्यों से हटने का, पुरुषार्थ नहीं कर पाए हैं।
अब शील स्वभाव जगाने को, हम पुष्प चढ़ाने आए हैं।।
चक्रवर्ति बलभद्र भूप कई, जिन अर्चा करने आते।
भक्ति भाव से गुण गाकर के, जिनपद में वह सिर नाते।।4।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक का अन्न प्राप्त कर, भूख मिटा ना पाए हैं।
अब क्षुधा व्याधि का रोग नशे, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।।
चक्रवर्ति बलभद्र भूप कई, जिन अर्चा करने आते।
भक्ति भाव से गुण गाकर के, जिनपद में वह सिर नाते।।5।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह-तिमिर में फंसने से, सम्यक् श्रद्धान न पाए हैं।
अब सम्यक् ज्ञान की ज्योति जगे, यह दीप चढ़ाने लाए हैं।।
चक्रवर्ति बलभद्र भूप कई, जिन अर्चा करने आते।
भक्ति भाव से गुण गाकर के, जिनपद में वह सिर नाते।।6।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अष्ट कर्म की ज्वाला में, सदियों से जलते आए हैं।
अब आठों कर्म जलाने को, यह धूप जलाने लाए हैं।।

चक्रवर्ति बलभद्र भूप कई, जिन अर्चा करने आते।
भक्ति भाव से गुण गाकर के, जिनपद में वह सिर नाते।।7।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तीव्र रागकर पुण्य फलों में, पाप सदा उपजाए हैं।
हम चढ़ा रहे हैं फल अनुपम, अब शिवपद पाने आए हैं।।
चक्रवर्ति बलभद्र भूप कई, जिन अर्चा करने आते।
भक्ति भाव से गुण गाकर के, जिनपद में वह सिर नाते।।8।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

रोग अनादि है अनन्त भव, नाश नहीं कर पाए हैं।
अब पद अनर्घ पाने अनुपम, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।।
चक्रवर्ति बलभद्र भूप कई, जिन अर्चा करने आते।
भक्ति भाव से गुण गाकर के, जिनपद में वह सिर नाते।।9।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप : ॐ ह्रीं समवशरण स्थित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- चक्री काम कुमार अरु, नारायण बलदेव।
गणधर विद्याधर सभी, करें चरण की सेव।।

(शम्भू छन्द)

कर्म घातिया नाश प्रभु ने, केवलज्ञान प्रकाश किया।
अनन्त चतुष्टय को पाकर के, निजानन्द में वास किया।।
क्रोधानल को शांत किया है, क्षमा भाव प्रगटाया है।
क्रोधी ने भी शरण में आकर, श्रेष्ठ शांति को पाया है।।1।।

क्रोधादि से जीव घात हो, शुभ भावों का होय विनाश।
पापों का आस्रव हो भारी, मित्रादि न आते पास।।
स्वजन और परिजन दुःख पाते, सारे जग में होय भ्रमण।
समतादि सद्गुण नश जाते, दुर्गति में हो जाय गमन।।2।।
मोह की महिमा बड़ी निराली, पर में मोहित होते जीव।
मिथ्याज्ञानी बनकर भाई, पापास्रव भी करें अतीव।।
मोहादि को प्रभु ने जीता, कर्मों ने भी मानी हार।
ध्यान सघन के द्वारा प्रभु ने, उनका कीन्हा है संहार।।3।।
अनन्त चतुष्टय पाये प्रभु ने, पाए दिव्यज्ञान भंडार।
सौ-सौ इन्द्र चरण में आकर, वन्दन करते बारम्बार।।
समवशरण की रचना करते, खुश हो करके अपरम्पार।
प्रातिहार्य प्रगटाते अनुपम, सर्व जगत में मंगलकार।।4।।
चक्रवर्ति बलभद्र आदि नर, मिलकर आते सह परिवार।
कामदेव नारायण आकर, वन्दन करते शत्-शत् बार।।
अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर, पूजा करते हैं मनहार।
महिमा का वर्णन करने में, न समर्थ है सुर परिवार।।5।।
मण्डलीक राजा भी आकर, पूजा करते जहाँ महान।
महा मण्डलेश्वर भी चरणों, आकर करते हैं गुणगान।।
महिमा धर्म की अनुपम होती, हो जाता है जगत प्रसिद्ध।
कर्म अघाति नाश करें फिर, अर्हत् भी हो जाते सिद्ध।।6।।
नर तिर्यंच भी अर्चा करते, जिन वन्दन भी करें त्रिकाल।
श्रेष्ठ आरती करते हैं सब, करके अनुपम दीप प्रजाल।।

समवशरण में चौबीसों जिन, की पूजा दे सौख्य अपार।।
अनुक्रम से भवि जीवों को जो, पहुँचाती है शिव के द्वार।।7।।

दोहा- समवशरण की अर्चना, से हो वैभववान।
अनुक्रम से भवि जीव को, पहुँचावे निर्वाण।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- जिन अर्चा करके सभी, होते महिमावंत।
कर्म नाशकर अन्त में, हो जाते भगवन्त।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

जिनेन्द्र विहार वर्णन

समवशरण युत श्री जिनेन्द्र का, इच्छा विरहित होय विहार।
नाम कर्म के उदय से भाई, योग्यकाल में हो मनहार।।
अवधिज्ञान से इन्द्र जानकर, विनती करता भली प्रकार।
भवि जीवों के हित हो प्रभु जी, आगे-आगे मंगलकार।।1।।

दिव्य ध्वनि खिरती है अनुपम, होती नभ में जय जयकार।
फूल और फल खिलते मग में, षट् ऋतुओं के अपरम्पार।।
वृक्ष पंक्तियाँ धान्य अठारह, सहज शोभते मंगलकार।
कुण्ड बावड़ी और सरोवर, जल से पूरित हों मनहार।।2।।

दर्पणवत् भूमि शोभित हो, पुष्पवृष्टि भी होय महान।
धूलि और कंटक से विरहित, भूमि होती आभावान।।
चरण कमल तल कमल सुरचते, पन्द्रह के शुभ वर्ग प्रमाण।
उसके ऊपर अधर प्रभु जी, डग भरते ज्यों चलते मान।।3।।

इच्छा रहित प्रभु की वाणी, खिरती जन-जन के हितकार।
भव्य जीव के पुण्य योग से, प्रभु का होता स्वयं विहार।।
प्रभु की दिव्य देशना खिरती, सर्वाङ्गों से मंगलकार।
ॐकारमय वाणी अनुपम, पाते हैं प्राणी सुखकार।।4।।

गणधर मुनि आर्यिका सुर-नर, करते प्रभु के साथ विहार।
आगे-आगे धर्मचक्र ले, चँवर ढौरते सुर परिवार।।
देव दुन्दुभि दिव्य बजाते, नृत्य-गान करते मनहार।
तीर्थंकर का वैभव लखकर, करते हैं सब जय-जयकार।।5।।

दोहा- समवशरण के गमन का, वर्णन यह शुभकार।
भक्ति भाव से लघु यह, कीन्हा योग सम्हार।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

सर्व समुच्चय पूजा

(स्थापना)

कृत्रिमाकृत्रिम चैत्य लोक में, उनकी हम पूजा करते।
भवसागर से पार उतरने, जिन चरणों में सिर धरते।।
समृद्धि सौभाग्य प्रदायक, जिन पूजा है श्रेष्ठ महान।
हृदय सरोवर के पंकज में, करते भाव सहित आह्वान।।

दोहा- जिनबिम्बों की अर्चना, करते बारम्बार।
मोक्ष मार्ग शुभ प्राप्तकर, पाने शिव का द्वार।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(गीता छन्द)

ज्ञान स्वभावी निर्मल जल का, सागर उर में लहराए।
भवसागर के भँवरों में कई, जन्म-मरण के दुःख पाए।।
निज स्वरूप प्रगटाने को, यह निर्मल नीर चढ़ाते हैं।
भव सागर से पार करो, हम सादर शीश झुकाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज स्वरूप के उपवन में, न श्रद्धा के तरु उपजाए।
आयु कर्म के दावानल में, जलकर के बहु दुख पाए।।
निज स्वरूप प्रगटाने को, यह चंदन चरण चढ़ाते हैं।
भव सागर से पार करो, हम सादर शीश झुकाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

गुणानन्त के उज्ज्वल अक्षत, साथ सदा से हम लाए।
फिर भी अक्षय पद न पाया, तीन लोक में भटकाए।
निज स्वरूप प्रगटाने को, यह अक्षत धवल चढ़ाते हैं।
भव सागर से पार करो, हम सादर शीश झुकाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सहजानन्द स्वरूपी चेतन, की सुरभि से महकाए।
शील स्वभाव प्रकट कर चेतन, जिन सिद्धों में मिल जाए।।
निज स्वरूप प्रगटाने को हम, सुरभित पुष्प चढ़ाते हैं।
भव सागर से पार करो, हम सादर शीश झुकाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

है चैतन्य स्वभावी लक्षण, उसको भी हम विसराए।
परम भाव नैवेद्य बनाकर, निज पद पाने को आए।।

निज स्वरूप प्रगटाने को, हम शुभ नैवेद्य चढ़ाते हैं।
भव सागर से पार करो, हम सादर शीश झुकाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानदीप रोशन करने से, यह सारा जग चमकाए।
मोह तिमिर के कारण अब तक, नहीं स्वयं को लख पाए।।
निज स्वरूप प्रगटाने को हम, अनुपम दीप जलाते हैं।
भव सागर से पार करो, हम सादर शीश झुकाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म ध्यान बिन भव की भीषण, ज्वाला में जलते आए।
अष्ट कर्म सम्पूर्ण जलाकर, अष्ट सुगुण पाने आए।।
निज स्वरूप प्रगटाने को हम, सुरभित धूप जलाते हैं।
भव सागर से पार करो, हम सादर शीश झुकाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ भावों के सरस पुण्य फल, पद पंकज में हम लाए।
महामोक्ष फल हमें प्राप्त हो, यही भावना हम भाए।।
निज स्वरूप प्रगटाने को हम, श्रीफल सरस चढ़ाते हैं।
भव सागर से पार करो, हम सादर शीश झुकाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

विनय भाव का अर्घ्य बनाकर, चरणाम्बुज में हम लाए।
सिद्ध स्वपद की प्राप्ति हमें हो, अर्घ्य चढ़ाने हम आए।।
निज स्वरूप प्रगटाने को हम, अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
भव सागर से पार करो, हम सादर शीश झुकाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा - प्रभु भक्त हम आपके, भक्ति करें त्रिकाल।
चौबीसों जिनराज की, गाते हैं जयमाल।।

(चाल-टप्पा)

कर्म घातिया नाश किए तब, हुए ज्ञानधारी।
मोक्षमार्ग पर बढ़ने वाले, जग-जन उपकारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

आदिनाथ हैं आदि जिनेश्वर, जिन गुण के धारी।
अजितनाथ हैं नाथ लोक में, अति विस्मयकारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

संभव जिन की भक्ति भाई, जग में हितकारी।
अभिनंदन का वंदन होता, जग मंगलकारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

सुमतिनाथ की दिव्य देशना, अतिशय सुखकारी।
पद्मप्रभु जी रहें लोक में, बनकर अविकारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

जिन सुपार्श्वजी पार्श्वमणि सम, हैं गुण के धारी।
चन्द्रप्रभु जी पूर्ण चाँदनी, सम शीतल धारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

पुष्पदंत ने कर्म अंत की, कीन्ही तैयारी।
शीतलनाथ जिनेश्वर की तो, महिमा है न्यारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

श्रेयनाथ जी श्रेय प्रदाता, हैं करुणाकारी।
वासुपूज्य जग पूज्य हुए हैं, ऋषिवर अनगारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

विमलनाथ जी मुक्ति हमको, मिल जाए प्यारी।
श्री अनंत जिन हैं इस जग में, गुण अनंतधारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

धर्मनाथ जिनराज कहे हैं, विशद धर्मधारी।
शांतिनाथ जी हैं इस जग में, परम शांतिकारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

कुंथुनाथ जिन हुए लोक में, त्रयपद के धारी।

अरहनाथ भी रहे जहाँ में, अति महिमाधारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

मल्लिनाथ कर्मों के नाशी, अतिशय अविकारी।
मुनिसुव्रतजी व्रत धारण कर, हुए ज्ञानधारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

नमिनाथ की पूजा करते, सारे नर-नारी।
नेमिनाथ वैराग्य धारकर, पहुँचे गिरनारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

पार्श्वनाथ ने कठिन परिषह, सहन किए भारी।
महावीर की महिमा जग में, है विस्मयकारी।।
जिनेश्वर हैं अतिशयकारी।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, हैं मंगलकारी।।

(छन्द - घत्तानन्द)

जय-जय जिन स्वामी अन्तर्यामी, मोक्षमार्ग के पथगामी।
जय शिवपुरगामी त्रिभुवननामी, सिद्ध शिला के हो स्वामी।।

ॐ ह्रीं वर्तमानकाल सम्बन्धी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व.स्वाहा।

दोहा - चौबीसों जिनराज को, वंदन बारम्बार।
तीर्थंकर पद प्राप्त कर, पाऊँ भवदधि पार।।

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

24 तीर्थंकर गणधर मुनि पूजन

(स्थापना)

हे तीर्थंकर ! केवलज्ञानी, सर्वज्ञ प्रभु जग हितकारी।
हे गणधर स्वामी ! जिनवर के, तुम कृपा करो हे त्रिपुरारी।।
निर्ग्रन्थ मुनीश्वर ऋद्धीधर, तव करते हैं हम आह्वानन।
दो हमको शुभ आशीष विशद, हम करते हैं शत्-शत् वन्दन।
हे नाथ ! पुजारी चरणों में, तव पूजा करने आए हैं।
पूजा को अनुपम द्रव्यों के, यह थाल सजाकर लाए हैं।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शम्भू छन्द)

जल पिया अनादि से हमने, पर तृषा शान्त न हो पाई।
अति लगा हुआ है मिथ्या मल, हमने आतम न चमकाई।।
अब जन्म जरा हो नाश मेरा, हम नीर चढ़ाने लाए हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में, हम पूजा करने आए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन के वन घिश गये कई, पर शीतलता न मिल पाई।
सद् दर्शन की शुभ कली हृदय में, नहीं हमारे खिल पाई।।

चन्दन घिसकर मलयागिरि का, हम आज चढ़ाने आए हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में, हम पूजा करने आए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

भर-भर कर थाल तन्दुलों के, कई खाकर बहुत नशाए हैं।
अक्षय पद जो है अखण्ड वह, प्राप्त नहीं कर पाए हैं।।
अब अक्षय पद के हेतु यहाँ, यह अक्षत अक्षत लाए हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में, हम पूजा करने आए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

तृष्णा की खाई है असीम, वह पूर्ण नहीं हो पाती है।
है काम वासना दुखदायी, भव-भव में हमें सताती है।।
हम काम वासना नाश हेतु, यह पुष्प सुगन्धित लाए हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में, हम पूजा करने आए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

यह क्षुधा वेदना जीवों को, सदियों से छलती आई है।
खाकर मिष्ठान अनादी से, न तृप्ति हमें मिल पाई है।।
अब क्षुधा वेदना नाश हेतु, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में, हम पूजा करने आए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ दीपक तिमिर का नाशक है, मिथ्यातम को न हरण करे।
चैतन्य प्रकाशित करता वह, रत्नत्रय को जो ग्रहण करे।।

अब विशद ज्ञान का दीप जले, हम दीप जलाकर लाए हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में, हम पूजा करने आए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि में धूप जलाने से, आकाश सुवासित होता है।
जब तीव्र कर्म का वेग बढ़े, चेतन शक्ति तब खोता है।।
अब अक्षय पद के हेतु यहाँ, यह अक्षत अक्षत लाए हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में, हम पूजा करने आए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

यह सरस मधुर फल खाने से, रसना की चाह बढ़ाते हैं।
हम चाह दाह के नाश हेतु, यह फल तव चरण चढ़ाते हैं।।
हो मोक्ष महाफल प्राप्त हमें, तव हर्ष-हर्ष गुण गाए हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में, हम पूजा करने आए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हमने अनर्घ पद पाने का, सदियों से भाव बनाया है।
किन्तु विषयों में फँसने से, वह पद हमने न पाया है।।
अब पद अनर्घ के हेतु प्रभो !, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में, हम पूजा करने आए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

24 गणधर के अर्घ्य

वृषभादि जिनके हुए, गणधर ऋषि चौबीस।
पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, चरण झुकाकर शीश।।

(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

ऋषभ नाथ के समवशरण में, 'वृषभसेन' गणधर स्वामी।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धीधारी, हुए मोक्ष के अनुगामी।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।1।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री वृषभनामस्य 'वृषभसेनादि' चतुरशीति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नब्बे गणधर अजितनाथ के, 'सिंहसेन' जी रहे प्रधान।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धीधारी, का हम करते हैं सम्मान।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।2।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री अजितनाथस्य 'सिंहसेनादि' नवति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर पञ्च एक सौ जानो, श्री सम्भव जिनवर के साथ।
'चारूदत्त' गणधर मुनिवर कई, के पद झुका रहे हम माथ।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।3।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री संभवनाथस्य 'चारूदत्तादि' पंचोत्तरशतम् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनन्दन जिनवर के गणधर, 'वज्रादि' हैं एक सौ तीन।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धीधारी, कहे गये हैं ज्ञान प्रवीण।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।4।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री अभिनन्दन नाथस्य 'वज्रादि' त्र्याधिकशतं गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'तौटक' आदि एक सौ सोलह, सुमतिनाथ के रहे गणेश।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धीधारी, धारे स्वयं दिगम्बर भेष।।
दुःखहर्त्ता सुख कर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।5।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री सुमतिनाथस्य 'तौटक' षोडशाधिकशतं गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वज्रचमर' आदि दश इक सौ, पद्मप्रभु के हुए गणेश।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धीधारी, धारे स्वयं दिगम्बर भेष।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।6।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री पद्मनाथस्य 'वज्रचमरादि' दशधिकशतं गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्च ऊन इक शतक गणी थे, श्री सुपार्श्व जिनवर के साथ।
'बलदत्तादि' अन्य मुनीश्वर, को हम झुका रहे हैं माथ।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।7।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री सुपार्श्वनाथस्य 'बलदत्तादि' पंचनवति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन अधिक नब्बे गणधर थे, चन्द्र प्रभु के साथ महान।
'दत्तादि' कई अन्य मुनीश्वर, का हम करते हैं गुणगान।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।8।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री चंद्रप्रभस्य 'दत्तादि' त्रिनवति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ अधिक अस्सी गणधर शुभ, पुष्पदन्त के साथ रहे।
'श्री नंगादि' अन्य मुनीश्वर, श्रेष्ठ प्रभु के भक्त कहे।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।9।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री पुष्पदंतस्य 'नंगादि' अष्टाशीति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक अधिक अस्सी गणधर शुभ, शीतलनाथ के हुए महान।
'अनगारादि' अन्य मुनीश्वर, का हम करते हैं सम्मान।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।10।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री शीतलनाथस्य 'अनगारादि' एकाशीतिः गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सौधर्मादि' रहे सतत्तर, जिन श्रेयांस के गणधर साथ।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धीधारी, को हम झुका रहे हैं माथ।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।11।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री श्रेयांसनाथस्य 'सौधर्मादि' सप्तसप्तति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मंदर आदि छियासठ शुभ, गणधर वासुपूज्य के साथ।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धीधारी, को हम झुका रहे हैं माथ।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।12।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री वासुपूज्यस्य 'मंदरादि' षट्वष्टिः गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विमल नाथ के 'जय' आदि शुभ, पचपन गणधर रहे महान।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धिधारी, को हम झुका रहे हैं माथ।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।13।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री विमलनाथस्य 'जयादि' पंचपंचाशत गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अनन्त जिनवर के गणधर, आगम में बतलाए पचास।
'अरिष्टादि' कई अन्य मुनीश्वर, के पद में हो मेरा वास।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।14।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री अनन्तनाथस्य 'अरिष्टादिक' पंचाशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अरिष्ट सेनादि' तैतालिस, धर्मनाथ के कहे गणेश।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धिधारी, धारे स्वयं दिगम्बर भेष।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।15।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री धर्मनाथस्य 'अरिष्टसेनादि' त्रिचत्वारिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतिनाथ स्वामी के गणधर, 'चक्रायुध' आदि छत्तीस।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धिधारी, के पद झुका रहे हम शीश।।
दुःखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।16।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नम: श्री शांतिनाथस्य 'चक्रायुधादि' षट्त्रिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्थुनाथ जिनवर के गणधर, 'अमृतसेनादि' पैतीस।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धिधारी, के पद झुका रहे हम शीश।।
दु:खहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।17।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नम: श्री कुंथुनाथस्य 'अमृतसेनादि' पंचत्रिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरहनाथ जिनवर के गणधर, 'श्री सुषेण' आदि थे तीस।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धिधारी, के पद झुका रहे हम शीश।।
दु:खहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।18।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नम: श्री अरहनाथस्य 'श्री सुषेणादि' त्रिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्लिनाथ जिनवर के गणधर, 'श्री विशाख' आदि अठबीस।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धिधारी, के पद झुका रहे हम शीश।।
दु:खहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।19।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नम: श्री मल्लिनाथस्य 'विशाखाचार्यादि' अष्टाविंशति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रत के गणधर जानो, अष्टादश 'धारण' आदि।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धिधारी, हरते है सबकी व्याधि।।
दु:खहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।20।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नम: श्री मुनिसुव्रतनाथस्य 'धारण' आदि अष्टादश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नमिनाथ के सत्रह गणधर, जानो भाई 'सोमादि'।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धिधारी, हरते हैं सबकी व्याधि।।
दु:खहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।21।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नम: श्री नमिनाथस्य 'सोमादि' सप्तदश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वरदत्तादि' ग्यारह गणधर, नेमिनाथ के साथ कहे।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धिधारी, के चरणों मम माथ रहे।।
दु:खहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।22।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नम: श्री नेमिनाथस्य 'वरदत्तादि' एकादश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर श्रेष्ठ 'स्वयंभू आदि, पार्श्वनाथ के दश जानो।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धिधारी, मुनियों को भी पहिचानो।।
दु:खहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।23।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नम: श्री पार्श्वनाथस्य 'स्वयंभ्वादि' दश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'इन्द्रभूति' आदि गणधर थे, ग्यारह महावीर के साथ।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धिधारी, के पद झुका रहे हम माथ।।
दु:खहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार।।24।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री महावीरनाथस्य 'इन्द्रभूत्यादि' एकादश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर चौबिस के गणधर, चौदह सौ बावन जानो।
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाने वाले, शुभ मंगलकारी मानो।।
मोक्षमार्ग के राही अनुपम, अतिशयकारी रहे ऋशीष।
अर्घ्य चढ़ाकर उनके चरणों, झुका रहे हम अपना शीश।।25।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री वृषभादि द्विपञ्चाशदिधक चतुर्दशशत गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- तीर्थंकर गणधर मुनी, होते पूज्य त्रिकाल।
चौंसठ ऋद्धीवान की, गाते हैं जयमाल।।

(शम्भू छन्द)

परिशुद्ध हृदय जिनका निर्मल, गुणगण के अनुपम कोष रहे।
तीर्थंकर जिनके गणनायक, आगम में गणधर देव कहे।।
जो मति श्रुत अवधि मनःपर्यय, शुभ चार ज्ञान के धारी हैं।
जो भौतिक तत्त्वों के ज्ञाता, अरु पूर्ण रूप अविकारी हैं।।1।।

स्याद्वाद ज्ञान गंगाधारी, पर मत का खण्डन करते हैं।
अनेकांत भाव पाने वाले, गुरु पश्च महाव्रत धरते हैं।।
जो अंग पूर्व के धारी हैं, अष्टांग निमित्त के ज्ञाता हैं।
शुभ दिव्य देशना झेल रहे, जग में भव्यों के ज्ञाता हैं।।2।।

गुरु अष्ट ऋद्धि के धारी हैं, जिन प्रज्ञा श्रमण कहाते हैं।
शुभ स्वप्न शकुन ज्योतिष ज्ञाता, तन परमौदारिक पाते हैं।।

जो अनेकांत के धारी हैं, एकान्त ध्यान में लीन रहे।
हैं परम अहिंसा व्रतधारी, गणधर जिनेन्द्र के श्रेष्ठ कहे।।3।।

गुरु घोर पराक्रम के धारी, जो घोर परीषह सहते हैं।
हर एक विषमता को सहकर, जो शान्त भाव से रहते हैं।।
तीर्थंकर जिन के दिव्य वचन, ॐकार रूप से आते हैं।
किरणों की प्रखर रोशनी सम, गणधर में आन समाते हैं।।4।।

जिन वचन महोदधि है अनन्त, जिसका होता न अंत कहीं।
शत् इन्द्र चक्रवर्ति आदी, जिन संत समझते पूर्ण नहीं।।
गणधर गूंथित जैनागम ही, भवि जीवों का ज्ञान प्रदाता है।
रत्नत्रय धर्म प्रदायक है, जो मोक्ष महल का दाता है।।5।।

जिनधर्म धारकर भवि प्राणी, कर्मों का पूर्ण विनाश करें।
फिर अनन्त चतुष्टय को पाकर, जिन केवल ज्ञान प्रकाश करें।।
हम तीन काल के तीर्थंकर, गणधर को शीश झुकाते हैं।
अब गुण पाने जिन गणधर के, हम चरण-शरण को पाते हैं।।6।।

(छन्द घत्तानन्द)

जिन पद अनुगामी, गणधर स्वामी, मोक्षमार्ग के पथगामी।
जय गण के स्वामी, तुम्हें नमामी, द्रव्य भार श्रुतधर नामी।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः श्री चतुर्विंशति तीर्थंकराणां श्री वृषभसेनादि एक सहस्र चतुर्शतक द्विपंचाशत गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के पद नमूँ, गणधर करूँ प्रणाम।
पुष्पाञ्जलि करके विशद, पाऊँ मुक्तिधाम।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

चौसठ ऋद्धि पूजा

(स्थापना)

तीर्थंकर चौबीस लोक में, मंगलमय मंगलकारी।
गणधर ऋद्धीधारी गुरुवर, होते हैं कल्मषहारी।।
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ चौंसठ अनुपम, जिनकी महिमा रही महान्।
तीर्थंकर गणधर का करते, श्रेष्ठ ऋद्धियोंमय आह्वान।।
यही भावना रही हमारी, होवे इस जग का कल्याण।
विशद भाव से करते हैं हम, उन प्रभु का अतिशय गुणगान।।

ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकर मुनीन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकर मुनीन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकर मुनीन्द्र ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल टप्पा)

प्रासुक गंगा का जल लाए, भरकर के झारी।
जन्मादि के रोग शांत हों, मिटे व्याधि सारी।।
ऋद्धियाँ हैं मंगलकारी।
बुद्धी आदि श्रेष्ठ ऋद्धियाँ, होतीं दुखहारी- ऋद्धियाँ.......।।1।।

ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चन्दन मलयागिर का, रहा तापहारी।
भव आताप नाश हो मेरा, जो है अघकारी।।
ऋद्धियाँ हैं मंगलकारी।
बुद्धी आदि श्रेष्ठ ऋद्धियाँ, होतीं दुखहारी- ऋद्धियाँ.......।।2।।

ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकरेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय अक्षत चढ़ा रहे हम, अतिशय मनहारी।
अक्षय पद हो प्राप्त हमें शुभ, जो अक्षयकारी।।
ऋद्धियाँ हैं मंगलकारी।
बुद्धी आदि श्रेष्ठ ऋद्धियाँ, होतीं दुखहारी- ऋद्धियाँ.......।।3।।

ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकरेभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

रंग-बिरंगे पुष्प मँगाए, यह सुवासकारी।
कामबाण के नाशक हैं, जो अति महिमाकारी।।
ऋद्धियाँ हैं मंगलकारी।
बुद्धी आदि श्रेष्ठ ऋद्धियाँ, होतीं दुखहारी- ऋद्धियाँ.......।।4।।

ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकरेभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत के यह नैवेद्य मनोहर, भर लाए थारी।
क्षुधा रोग हो नाश हमारा, अतिशय दुखकारी।।
ऋद्धियाँ हैं मंगलकारी।
बुद्धी आदि श्रेष्ठ ऋद्धियाँ, होतीं दुखहारी- ऋद्धियाँ.......।।5।।

ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत का दीप जलाकर लाए, हम यह मनहारी।
मोह अंध का नाश होय मम, देता दुख भारी।।
ऋद्धियाँ हैं मंगलकारी।
बुद्धी आदि श्रेष्ठ ऋद्धियाँ, होतीं दुखहारी- ऋद्धियाँ.......।।6।।

ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट गंधमय धूप जलाते, यह विस्मयकारी।
कर्मों का हो नाश हमारे, जो हैं दुखकारी।।

ऋद्धियाँ हैं मंगलकारी।
बुद्धी आदि श्रेष्ठ ऋद्धियाँ, होतीं दुखहारी- ऋद्धियाँ.......।।7।।
ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे सरस-सरस फल लाए, अतिशय मनहारी।
मोक्ष महल में जाने की है, अब मेरी बारी।।
ऋद्धियाँ हैं मंगलकारी।
बुद्धी आदि श्रेष्ठ ऋद्धियाँ, होतीं दुखहारी- ऋद्धियाँ.......।।8।।
ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद अनर्घ पाने को आतुर, है दुनियाँ सारी।
उसको पाने के हैं भाई, हम भी अधिकारी।।
ऋद्धियाँ हैं मंगलकारी।
बुद्धी आदि श्रेष्ठ ऋद्धियाँ, होतीं दुखहारी- ऋद्धियाँ.......।।9।।
ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकरेभ्यो अनर्घपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौसठ ऋद्धि के अर्घ्य

चौसठ ऋद्धि के यहाँ, चढ़ा रहे हम अर्घ्य।
पुष्पाञ्जलि करते विशद, पाने स्वपद अनर्घ।।

(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(ताटंक छन्द)

द्वादश तप जो तपते मुनिवर, ऋद्धि पाते कई प्रकार।
अवधि ज्ञान षट् भेद युक्त शुभ, जिनका गुण प्रत्यय आधार।।
देशावधि परमा सर्वावधि, रूपी यह द्रव्य दिखाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, ऋद्धी यह प्रगटाते हैं।।1।।
ॐ ह्रीं अवधि बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कैसा चिंतन करे कोई भी, मनःपर्यय से होवे ज्ञात।
ऋजु-मति अरु विपुलमति द्वय, भेद रूप जग में विख्यात।।
अवधि ज्ञान से सूक्ष्म विषय भी, मुनिवर हमें दिखाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, ऋद्धी यह प्रगटाते हैं।।2।।
ॐ ह्रीं मनःपर्यय बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चउ कर्म घातिया क्षय होते, शुभ केवलज्ञान प्रकट होता।
दर्पण वत् लोकालोक दिखे, सब कर्म कालिमा को खोता।।
ऋद्धी शुभ केवलज्ञान जगे, तब अर्हत् पद को पाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, ऋद्धी यह प्रगटाते हैं।।3।।
ॐ ह्रीं केवल बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ शब्द श्रृंखला के द्वारा, जब एक शब्द का ज्ञान किए।
हो प्रतिभाषित सारा आगम, जागे तब श्रुत सम्पूर्ण हिय।।
है कल्पवृक्ष सम बुद्धि बीज, पाने का भाव बनाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, ऋद्धी यह प्रगटाते हैं।।4।।
ॐ ह्रीं बीज बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्यों धान्य भरे कोठे में कई, फिर भी वह भिन्न-भिन्न रहते।
मिश्रण बिन बुद्धि से आगम, वह पृथक्-पृथक् ही मुनि कहते।।
उन कोष्ठ बुद्धि ऋद्धि धारी, मुनिवर को शीश झुकाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, ऋद्धी यह प्रगटाते हैं।।5।।
ॐ ह्रीं कोष्ठ बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन ग्रन्थों में पद हैं अनेक, मुनि मात्र एक पद ज्ञान करें।
हो पूर्ण ग्रन्थ का सार प्राप्त, करके जग का अज्ञान हरें।।

है श्रेष्ठ ऋद्धि पादानुसारिणी, जिनवर यह बतलाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, ऋद्धी यह प्रगटाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं पादानुसारिणी बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह श्रवण का विस्मय है विशेष, समझें नर-पशु की भाषा को।
वह नौ योजन की जान रहे, त्यागें सब मन की आशा को।।
जो अक्षर और अनक्षर मय, द्वय भाषा में समझाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं संभिन्न-श्रोतृ बुद्धि ऋद्धी धारक, सर्व ऋषिश्वर पूजित, श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रसना इन्द्रिय की दीवानी, दिखती यह सारी जगती है।
गुरु नीरस व्रत उपवास करें, शायद उन्हें भूख न लगती है।।
नौ योजन दूर की वस्तु का, गुरु रसास्वाद पा जाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं दूरास्वादन बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं विषय अष्ट स्पर्शन के, जग के प्राणी सब पाते हैं।
जो अशुभ और शुभ रूप रहे, छूने से ज्ञान कराते हैं।।
नौ योजन दूर की वस्तु का, स्पर्श गुरु पा जाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं दूरस्पर्शन बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुर्गन्ध सुगन्ध घ्राण के द्वय, प्रभु ने यह विषय बताए हैं।
जग के प्राणी उनको पाकर, दुख सुख पाकर अकुलाए हैं।
नौ योजन दूर की वस्तु का, गुरु गंध ज्ञान पा जाते हैं।।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।।10।।

ॐ ह्रीं दूरगन्ध बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आतापन आदि तप करने, मुनिवर गिरि ऊपर जाते हैं।
फिर आतम रस में लीन हुए, अरु आत्म सरस रस पाते हैं।।
उत्कृष्ट विषय कर्णेन्द्रिय का, उसकी शक्ति उपजाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।।11।।

ॐ ह्रीं दूर श्रवण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेत्रेन्द्रिय का उत्कृष्ट विषय, तप करके जो प्रकटाते हैं।
नेत्रों की शक्ति से ज्यादा, वह आतम शक्ति बढ़ाते हैं।।
यह श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाकर भी, मुनि हर्ष खेद न पाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।।12।।

ॐ ह्रीं दूरावलोकन ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अविराम ज्ञान उपयोग करें, विश्राम कभी न करते हैं।
प्रज्ञा को स्वयं विकासित कर, अज्ञान तिमिर को हरते हैं।।
जो हैं महान प्रज्ञाधारी, गुरु प्रज्ञा श्रमण कहाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।।13।।

ॐ ह्रीं प्रज्ञाश्रमण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुत ज्ञान का विषय अनन्तक है, जो लोकालोक दिखाता है।
अष्टांग निमित्तक है महान, शुभ अशुभ का ज्ञान कराता है।।
स्वर-अंग भौम व्यंजन आदि, इनसे पहिचाने जाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।।14।।

ॐ ह्रीं अष्टांगनिमित्त बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशम पूर्व पूरा होते ही, महा विद्यायें आ जावें।
शुभ कार्य हेतु आज्ञा माँगे, मुनिवर के मन वह न भावें।।

श्रुत का चिंतन करते-करते, श्रुत केवली बन जाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।।15।।

ॐ ह्रीं दशम पूर्व ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो चिंतन ध्यान मनन करते, नित स्वाध्याय में लीन रहें।
वह ग्यारह अंग पूर्व चौदह के, ज्ञान में सदा प्रवीण रहें।।
हम द्वादशांग का ज्ञान करें, यह विशद भावना भाते हैं।
संयम तप के द्वारा मुनिवर, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।।16।।

ॐ ह्रीं चतुर्दश पूर्व ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर पदार्थ तें जीव, भिन्न हैं भाई रे !
यातें पर की चाहत, मैटो भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
प्रत्येक-बुद्धि ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।17।।

ॐ ह्रीं प्रत्येक बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परवादी ऋषिवर के सम्मुख आई रे !
स्याद्वाद कर किया पराजित भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
वादित्य ऋद्धीधर पूजों हो जिन भाई रे !।।18।।

ॐ ह्रीं वादित्य बुद्धि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल के ऊपर थल वत् चालें भाई रे !
जल जंतु का घात न होवे भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
जल चारण ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।19।।

ॐ ह्रीं जल चारण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चउ अंगुल भू ऊपर चाले भाई रे !
क्षण में बहु योजन तक जावे भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
जंघा चारण ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।20।।

ॐ ह्रीं जंघा चारण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मकड़ी के तंतु पर चालें भाई रे !
भार से तंतु भी न टूटे भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
तंतु चारण ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।21।।

ॐ ह्रीं तंतु चारण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प के ऊपर गमन करें सुन भाई रे !
पुष्प जीव को बाधा न हो भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
पुष्प चारण ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।22।।

ॐ ह्रीं पुष्पचारण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पत्र के ऊपर गमन करें सुन भाई रे !
पत्र जीव को बाधा न हो भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
पत्र चारण ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।23।।

ॐ ह्रीं पत्र चारण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बीजन पे मुनि गमन करें सुन भाई रे !
बीज जीव को बाधा ना हो भाई रे !

श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
बीज सु चारण ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।24।।

ॐ ह्रीं बीज चारण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेणीवत् मुनि गमन करे सुन भाई रे !
षट्काय जीव को घात न होवे भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
श्रेणी चारण ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।25।।

ॐ ह्रीं श्रेणी चारण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि शिखा पे गमन करें सुन भाई रे !
अग्नि शिखा भी हिले नहीं सुन भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
अग्नि चारण ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।26।।

ॐ ह्रीं अग्नि चारण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्युत्सर्गादि आसन से मुनि भाई रे !
गमन करें नभ माहिं ऋषीश्वर भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
नभ चारण ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।27।।

ॐ ह्रीं नभ चारण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि आहार करें जाके घर भाई रे !
चक्रवर्ती की सेना जीमें भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
अक्षीण संवास ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।28।।

ॐ ह्रीं अक्षीण संवास ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चार हाथ घर में मुनि तिष्ठे भाई रे !
ता घर चक्रवर्ती की सैन्य समाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
अक्षीण महानस ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।29।।

ॐ ह्रीं अक्षीण महानस ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि कर में आहार पड़त ही भाई रे !
क्षीर युक्त सुस्वादु होवे भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
क्षीर स्रावि ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।30।।

ॐ ह्रीं क्षीर स्रावि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि कर में आहार पड़त ही भाई रे !
मधु सम तिष्ठ सुगुण हो जावे भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
मधु स्रावि ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।31।।

ॐ ह्रीं मधुस्रावि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि कर में आहार पड़त ही भाई रे !
घृत सम मिष्ठ सुगुण हो जावे भाई रे !
श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
श्रेणी चारण ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।32।।

ॐ ह्रीं घृतस्रावी रस चारण ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि कर में विष अमृत होवे भाई रे !
वचनामृत संतुष्ट करें सुन भाई रे !

श्रेष्ठ ऋद्धियाँ प्रकट, किए जिन भाई रे !
श्रेणी चारण ऋद्धीधर पूजों भाई रे !।।33।।

ॐ ह्रीं अमृतस्रावी ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- अणु बराबर छेद में, घुस जावें मुनिराज।
अणिमा ऋद्धी धारते, तारण तरण जहाज।।34।।

ॐ ह्रीं अणिमा ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो सुमेरु सम देह को, बढ़ा लेय मुनिराज।
महिमा ऋद्धी धारते, तारण तरण जहाज।।35।।

ॐ ह्रीं महिमा ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्क तूल सम लघु हों, तप बल से मुनिराज।
लघिमा ऋद्धी धारते, तारण तरण जहाज।।36।।

ॐ ह्रीं लघिमा ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भारी होवे लोह सम, जिनका तन तत्काल।
गरिमा ऋद्धी धारते, मुनिवर दीन दयाल।।37।।

ॐ ह्रीं गरिमा ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूमि पर रहते खड़े, छूवें सूरज चंद।
प्राप्ति ऋद्धी के धनी, मुनी रहें निर्द्वन्द।।38।।

ॐ ह्रीं प्राप्ति ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल में मुनि यों पग धरें, ज्यों थल में चल जाएँ।
ऋद्धीधर प्राकाम्य के, ऐसी महिमा पाएँ।।39।।

ॐ ह्रीं प्राकाम्य ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग की प्रभुता प्राप्त कर, बनते ईश समान।
ऋद्धीधर ईशत्व के, जग में सर्व महान।।40।।

ॐ ह्रीं ईशत्व ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टि पड़ते मुनी की, वश में हों सब लोग।
महिमा होती यह सदा, वशित्व ऋद्धि के योग।।41।।

ॐ ह्रीं वशित्व ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घुसें छेद बिन शैल में, बाधा कोई न होय।
अप्रतिघाति ऋद्धिधर, सम न जग में कोय।।42।।

ॐ ह्रीं अप्रतिघाति ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिखते-दिखते लुप्त हों, न हो मुनि का भान।
ऋद्धि तप से प्रकट हों, मुनि के अन्तर्धान।।43।।

ॐ ह्रीं अन्तर्धान ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इच्छित फल पाते मुनी, इच्छित रूप बनाय।
काम रूपिणी ऋद्धिधर, जग में पूजे जायें।।44।।

ॐ ह्रीं कामरूपिणी ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(ताटंक छंद)

तप में लीन रहे तपती नित, उग्र-उग्र तप तपते रोज।
दीक्षा दिन से मरण काल तक, कर उपवास बढ़े शुभ ओज।।
कर्म शत्रु तप के द्वारा ही, भाई हो पाते निर्जीण।
पूजनीय वह धन्य मुनीश्वर, जिनने कर्म किये हैं क्षीण।।45।।

ॐ ह्रीं उग्र तपोतिशय ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनशन आदि तप करने से, क्षीण होय मुनिवर की देह।
दीप्ति तपो ऋद्धि से तन की, दीप्ति बढ़े तब निःसन्देह।।
कर्म शत्रु तप के द्वारा ही, भाई हो पाते निर्जीण।
पूजनीय वह धन्य मुनीश्वर, जिनने कर्म किये हैं क्षीण।।46।।

ॐ ह्रीं दीप्त तपोतिशय ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप से तप ऋद्धि की वृद्धि, करते हैं करके आहार।
तन मन बल बढ़ता है लेकिन, मल धातु न होय निहार।।
कर्म शत्रु तप के द्वारा ही, भाई हो पाते निर्जीण।
पूजनीय वह धन्य मुनीश्वर, जिनने कर्म किये हैं क्षीण।।47।।

ॐ ह्रीं तप्त तपोतिशय ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंह निष्क्रीडन आदि व्रत धर, व्रत पाले जो कई प्रकार।
त्याग करें उत्तम से उत्तम, महा तपो अतिशय को धार।।
कर्म शत्रु तप के द्वारा ही, भाई हो पाते निर्जीण।
पूजनीय वह धन्य मुनीश्वर, जिनने कर्म किये हैं क्षीण।।48।।

ॐ ह्रीं महातपोतिशय ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश तप तपते हैं मुनिवर, आतापन आदि धर योग।
घोर तपो अतिशय ऋद्धिधर, हो उपसर्ग तथा कोइ रोग।।
कर्म शत्रु तप के द्वारा ही, भाई हो पाते निर्जीण।
पूजनीय वह धन्य मुनीश्वर, जिनने कर्म किये हैं क्षीण।।49।।

ॐ ह्रीं घोर तपोतिशय ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकजयी सागर शोषण की, शक्ति पावें कई प्रकार।
घोर पराक्रम ऋद्धि धारी, पाते तप विध के आधार।।
कर्म शत्रु तप के द्वारा ही, भाई हो पाते निर्जीण।
पूजनीय वह धन्य मुनीश्वर, जिनने कर्म किये हैं क्षीण।।50।।

ॐ ह्रीं घोर पराक्रम ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच महाव्रत तिय गुप्ति धर, ब्रह्मचर्य व्रत से भरपूर।
अघोर ब्रह्मचर्य ऋद्धीधर से, कलह आदि भागें सब दूर।।

कर्म शत्रु तप के द्वारा ही, भाई हो पाते निर्जीण।
पूजनीय वह धन्य मुनीश्वर, जिनने कर्म किये हैं क्षीण।।51।।

ॐ ह्रीं अघोर ब्रह्मचर्य तपोतिशय ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(त्रिभंगी छंद)

मन बल की ऋद्धि रही प्रसिद्धी, श्रुत का चिन्तन होय विशेष।
चिन्तन की शक्ति प्रभु की भक्ति, से मुहूर्त में होय अशेष।।
संयम से पावें ध्यान लगावें, आतम की शुद्धि पावें।
ऋद्धि हम पावें ज्ञान जगावें, मुनिवर के शुभ गुण गावें।।52।।

ॐ ह्रीं मनोबल ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचनों की शक्ति प्रभु की भक्ति, करते श्रुत का उच्चारण।
हों वचन अनोखे जग में चोखे, ऋद्धि सिद्धि का हो कारण।।
मुनिवर की वाणी जग कल्याणी, कर्ण सुने तृप्ति पावें।
ऋद्धि हम पावें ज्ञान जगावें, मुनिवर के शुभ गुण गावें।।53।।

ॐ ह्रीं वचनबल ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खड्गासन ठाड़े गर्मी-जाड़े, कष्ट नहीं कोई पावें।
तप की यह शक्ति, देवे मुक्ति, अतिशय ऋद्धि दिखलावें।।
है ऋद्धि पावन जन मन भावन, मुनिवर ही इसको पावें।
ऋद्धि हम पावें ज्ञान जगावें, मुनिवर के शुभ गुण गावें।।54।।

ॐ ह्रीं कायबल ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चाल छन्द)

मुनि तप की अग्नि जलावें, फिर सारे कर्म नशावें।
आमर्षौषधि ऋद्धि धारी, हैं सारे रोग निवारी।।
हम पूजा करने आवें, चरणों में शीश झुकावें।
सब रोग शोक मिट जावें, आशीष आपका पावें।।55।।

ॐ ह्रीं आमर्षौषधि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कफ लार थूक आ जावे, जो सारे रोग नशावे।
खेल्लौषधि ऋद्धीधारी, हैं सारे रोग निवारी।।
हम पूजा करने आवें, चरणों में शीश झुकावें।
सब रोग शोक मिट जावें, आशीष आपका पावें।।56।।

ॐ ह्रीं खेल्लौषधि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन में जल स्वेद बनावे, वह शुभ औषधि बन जावे।
जल्लौषधि ऋद्धीधारी, हैं सारे रोग निवारी।।
हम पूजा करने आवें, चरणों में शीश झुकावें।
सब रोग शोक मिट जावें, आशीष आपका पावें।।57।।

ॐ ह्रीं जल्लौषधि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्णादि जिह्वा का मल, बन जाए औषधि मंगल।
मल्लौषधि ऋद्धीधारी, हैं सारे दोष निवारी।।
हम पूजा करने आवें, चरणों में शीश झुकावें।
सब रोग शोक मिट जावें, आशीष आपका पावें।।58।।

ॐ ह्रीं मल्लौषधि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बन जाए मूत्र जल औषधि, हर लेवे पर की व्याधि।
विड् औषधि ऋद्धीधारी, होते जग मंगलकारी।।
हम पूजा करने आवें, चरणों में शीश झुकावें।
सब रोग शोक मिट जावें, आशीष आपका पावें।।59।।

ॐ ह्रीं विडौषधि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि तन जो छूवे वायु, नश रोग बढ़ावे आयु।
सर्वौषधि ऋद्धिधारी, हम लेते व्याधि सारी।।

हम पूजा करने आवें, चरणों में शीश झुकावें।
सब रोग शोक मिट जावें, आशीष आपका पावें।।60।।

ॐ ह्रीं सर्वौषधि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्नादि में विष होवे, कहते मुनि के सब खोवे।
मुख निर्विष ऋद्धिधारी, हर लेते व्याधि सारी।।
हम पूजा करने आवें, चरणों में शीश झुकावें।
सब रोग शोक मिट जावें, आशीष आपका पावें।।61।।

ॐ ह्रीं मुखनिर्विषौषधि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टि में औषधि आवे, देखत ही जहर बिलावे।
दृष्टि निर्विष औषधधारी, हर लेते व्याधि सारी।।
हम पूजा करने आवें, चरणों में शीश झुकावें।
सब रोग शोक मिट जावें, आशीष आपका पावें।।62।।

ॐ ह्रीं दृष्टि निर्विषौषधि ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(ताटंक छंद)

उत्तम तप करने से मुनिवर, ऐसी ऋद्धि पाते हैं।
मानव से कह दें मरने को, शीघ्र वहीं मर जाते हैं।।
करुणा के धारी मुनिवर शुभ, कभी न ऐसा करते हैं।
देते हैं वरदान सभी को, औरों के दुख हरते हैं।।63।।

ॐ ह्रीं आशीर्विष ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोई गलती हो जाने पर, क्रोध यदि मुनि को आवे।
दृष्टि पड़ जावे यदि उस पर, शीघ्र मृत्यु को वह पावे।।
करुणा के धारी मुनिवर शुभ, कभी न ऐसा करते हैं।
देते हैं वरदान सभी को, औरों के दुख हरते हैं।।64।।

ॐ ह्रीं दृष्टिविष रस ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौंसठ श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते, केवलज्ञानी तीर्थंकर।
दिव्य देशना झेला करते, ऋद्धिधारी मुनि गणधर।।
अष्ट द्रव्य से पूजा करते, जिन चरणों में अपरम्पार।
विशद भाव से वन्दन करते, तीन योग से बारम्बार।।65।।

ॐ ह्रीं सर्व ऋद्धी धारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा - जिन मुद्राधारी मुनि, पावें ऋद्धि त्रिकाल।
उनकी हम गाते यहाँ, भाव सहित जयमाल।।

(शम्भू छन्द)

जय-जय तीर्थंकर क्षेमंकर, जय गणधर ऋद्धि के धारी।
जय मोक्ष मार्ग के अभिनेता, जय परम दिगम्बर अविकारी।।
प्रभु सकल व्रतों के धारी हैं, जो सम्यक् तप में लीन रहे।
वह श्रेष्ठ ऋद्धियों के धारी, इस धरती पर जिन संत कहे।।1।।
बुद्धि ऋद्धि के भेद अठारह, अतिशयकारी श्रेष्ठ रहे।
और विक्रिया ऋद्धि के भी, एकादश जिनदेव कहे।।
भेद क्रिया चारण ऋद्धि के, नव जानो अतिशयकारी।
तप ऋद्धि के भेद सप्त शुभ, कहे गये मंगलकारी।।2।।
बल ऋद्धि के भेद तीन शुभ, जैनागम में कहे महान्।
आठ भेद औषध ऋद्धि के, बतलाए हैं जिन भगवान।।
रस ऋद्धि के भेद कहे छह, जिनका कौन करें गुणगान।
अक्षीण ऋद्धि के भेद कहे दो, क्षीण न हो भोजन स्थान।।3।।

चौंसठ भेद कहे यह भाई, आठों ऋद्धि के सुखकार।
संख्यातीत भेद इनके ही, हो जाते हैं मंगलकार।।
बुद्धि ऋद्धि के द्वारा मुनिवर, बुद्धि पाते अतिशयकार।
और विक्रिया ऋद्धि द्वारा, रूप बनाते विविध प्रकार।।4।।
चारण ऋद्धि पाकर ऋषिवर, करते हैं आकाश गमन।
चलें पुष्प जल के ऊपर भी, फिर भी न हो जीव मरण।।
दीप्त सुतप आदि ऋद्धिधर, तप करते हैं विस्मयकार।
फिर भी काँतिमान तन पाते, मुनिवर करते न आहार।।5।।
तप्त सुतप ऋद्धिधारी मुनि, के न होता कभी निहार।
जगत विजय की शक्ति पाते, मुनिवर अतिशय ऋद्धिधार।।
क्षीर मधुर अमृत स्रावी रस, ऋद्धि से होता आहार।
क्षीर मधुर अमृत सम होता, मुनि के कर में मंगलकार।।6।।
औषधि ऋद्धिधर मुनि के तन, से स्पर्शित वायु के योग।
तन का मल छूट जाने से भी, हो जाता है जीव निरोग।।
जिन्हें प्राप्त अक्षीण ऋद्धियाँ, ऐसे श्रेष्ठ मुनि के पास।
अन्न क्षीण न होय कभी भी, अक्षय होता क्षेत्र विकास।।7।।

(छन्द घत्तानन्द)

जय-जय अविकारी, ऋद्धिधारी और ऋद्धियाँ सर्व प्रकार।
हम पूजें ध्यावें, शीश झुकावें, ऋषि चरणों में बारम्बार।।

ॐ ह्रीं चौसठ ऋद्धियुत तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- ऋद्धि सिद्धियों से विशद, पाकर शक्ति अपार।
रत्नत्रय निधि प्राप्त कर, मिले मोक्ष का द्वार।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

समुच्चय जयमाला

दोहा- समवशरण चौबीस जिन, के हैं पूज्य त्रिकाल।
यहाँ समुच्चय रूप से, गाते हैं जयमाल।।

(शम्भू छन्द)

पूर्व पुण्य के प्रबल योग से, तीर्थंकर पद पाते हैं।
सौ-सौ इन्द्र वन्दना करने, चरण-शरण में आते हैं।।
समवशरण की रचना करते, भक्ति भाव से अपरम्पार।
मणि रत्नों से सज्जित करते, चतुर्दिशा में बारम्बार।।1।।
ऋषभदेव के समवशरण का, बारह योजन था विस्तार।
आधा-आधा योजन घटते, वीर का इक योजन शुभकार।।
समवशरण की रचना उन्नत, चारों ओर से गोलाकार।
बीस सहस्र सीढ़ियाँ जानो, इक-इक हाथ की अपरम्पार।।2।।
चार कोट अरु पञ्च वेदी के, बीच वेदियाँ जानो आठ।
चारों ओर वीथियाँ पावन, गंधकुटी का अनुपम ठाठ।।
पार्श्व वीथियों में दो-दो शुभ, श्रेष्ठ वेदियाँ रही महान।
सभी भूमियों के पथ होते, सुन्दर तोरण द्वार प्रधान।।3।।
द्वारों पर नव निधि धूप घट, मंगल द्रव्य रहे मनहार।
साढ़े बारह कोटि वाद्य शुभ, देवों द्वारा बजें अपार।।
प्रतिद्वार के दोनों बाजू, एक-एक नाटकशाला।
जहाँ देव कन्याएँ करती, नृत्य हृदय हरने वाले।।4।।
धूलिशाल के चतुर्दिशा में, धर्मचक्रधारी हैं चार।
मानस्तम्भ बने चारों दिश, मद हरने वाले मनहार।।

प्रथम भूमि चैत्यालय की शुभ, मंदिर चारों ओर महान।
बनी वीथिकाएँ फिर सुन्दर, जल से पूरित रहीं प्रधान।।5।।
द्वितीय कोट फिर पुष्प वाटिका, की पंक्ति शुभ रही महान।
वन भू-वृक्ष अशोक आम्र तरु, चम्पक सप्तपर्ण पहिचान।
तृतिय कोट फिर कल्पवृक्ष भू, वेदी बनी नृत्यशाला।।
भवन भूमि स्तूप मनोहर, ध्वजा पंक्तियों की माला।।6।।
रहा महोदय मण्डप अनुपम, श्रुतकेवली का व्याख्यान।
केवलज्ञान लब्धि के धारी, भी देते उपदेश महान।।
चौथा कोट शाल है सुन्दर, कल्पवासी जिसके रक्षक।
श्री मण्डप भू जिसके आगे, गंधकुटी के आगे तक।।7।।
गंधकुटी में तीन पीठिका, कमल के ऊपर सिंहासन।
तरु अशोक सिर तीन क्षत्र हैं, भामण्डल द्युति मय दर्पण।
चतुर्दिशा में जिन के दर्शन, दिव्य ध्वनि का हो उच्चार।।
द्वादश सभा शोभती अनुपम, पुष्पवृष्टि हो मंगलकार।।8।।
गणधर चौदह सौ त्रेपन हैं, मुनि संघ हैं सात प्रकार।
लख अट्ठाइस सहस अड़तालिस, संख्या मुनियों की मनहार।।
चालिस सहस नव सौ सैंतिस शुभ, पूरवधारी मुनिवर गाये।
शिक्षक मुनि बीस लाख अरु, पाँच सौ पचपन बतलाये।।9।।
एक लाख सत्ताइस सहस्र अरु, छह सौ अवधि ज्ञानधारी।
केवलज्ञानी इक लाख पचत्तर, सहस्त्र आठ सौ शुभकारी।।
एक लाख सहस्त्र पैंतालिस, मुनिवर नो सौ पाँच महान।
विपुलमति मनःपर्यय ज्ञानी, करते थे प्रभु का गुणगान।।10।।

विक्रियाधारी मुनि लाख दो, पैंतिस सहस्र नौ सौ गुणवान।
एक लाख चौबीस सहस्र अरु, शतक तीन मुनि वादी मान।
लाख चवालिस सहस चौरानवे, साढ़े छः सौ आर्यिका जान।
श्रावक लाख रहे अड़तालिस, श्राविका लाख छियानवे मान।।11।।
तेरह सौ आठ कहे हैं जिनवर, अनुबद्ध केवली मंगलकार।
ग्यारह सौ व्यासी परम ऋषि, सामान्य मुनि का नहीं है पार।।
गत सिद्ध यति चौबीस लाख अरु, चौसठ हजार सौ चार कहे।
शुभ यक्ष यक्षिणी चौबिस थे, जो बनकर प्रभु के भक्त रहे।।12।।
ग्यारह हजार शत् पाँच एक कम, मुनि संग में मोक्ष गये।
अष्टापद सम्मेद ऊर्जयन्त, चम्पा पावा से कर्म क्षये।।
चौदह दिन वृषभेष वीर जिन, दो दिन कीन्हें योग निरोध।
एक माह में बाइस जिनों ने, योग रोध कर पाया बोध।।13।।
ऋषभ नेमि जिन वासुपूज्य प्रभु, पद्मासन से मोक्ष गये।
अन्य सभी इक्कीस जिनेश्वर, खड्गासन से कर्म क्षये।।
चौबीसों जिन के समवशरण की, रचना होवे एक समान।
समवशरण में जिन अर्चा कर, विशद पाएँ हम पद निर्वाण।।14।।

दोहा- समवशरण में शोभते, जिन चौबिस तीर्थेश।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य हम, अर्पित करें विशेष।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- स्वर्ग मोक्ष का धाम है, समवशरण मनहार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दना, करते बारम्बार।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

आरती

आज करें हम समवशरण की, आरति मंगलकारी।
घृत के दीप जलाकर लाए, प्रभुवर के दरबार।।
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती।

कर्म घातिया नाश किए प्रभु, केवलज्ञान जगाया।
अनन्त चतुष्टय पाए तुमने, सुख अनन्त को पाया।।
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती।

इन्द्र की आज्ञा पाकर भाई, धन कुबेर यहाँ आया।
स्वर्ण और रत्नों से सज्जित, समवशरण बनवाया।।
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती।

स्वर्ग से आकर इन्द्रों ने शुभ, प्रातिहार्य प्रगटाए।
प्रभु की भक्ति अर्चा करके, सादर शीश झुकाए।।
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती।

जिनबिम्बों से सज्जित अनुपम, अष्ट भूमियाँ जानो।
श्रेष्ठ सभाएँ सुर नर मुनि की, विस्मयकारी मानो।।
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती।

ॐकारमय दिव्य देशना, अतिशय प्रभु सुनाए।
'विशद' पुण्य का योग मिला यह, प्रभु के दर्शन पाए।।
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती।

* * *

प्रशस्ति

लोकालोक के मध्य में, मध्य लोक मनहार।
मध्यलोक के मध्य है, मेरु मंगलकार।।
मेरु की दक्षिण दिशा, में शुभ क्षेत्र महान्।
भरत क्षेत्र शुभ नाम है, अलग रही पहिचान।।2।।
उत्तर में हिमवन गिरि, दक्षिण लवण समुद्र।
तिय नदियाँ जिसमें महा, अन्य कई हैं क्षुद्र।।3।।
मध्य रहा विजयार्द्ध शुभ, जिसमें हैं छह खण्ड।
रहते हैं नर-पशु जहाँ, और रहे कई खण्ड।।4।।
कर्मभूमि जो है परम, बना है धनुषाकार।
मंगलमय रचना बनी, जग में अपरम्पार।।5।।
वर्तमान अवसर्पिणी, में चौबीस जिनेश।
तीर्थंकर पद में हुए, धार दिगम्बर भेष।।6।।
कामदेव चक्री तथा नारायण बलदेव।
जिन चरणों की अर्चन, करते स्वयं सदैव।।7।।
इन्द्र धनद आते स्वयं, लाते निज परिवार।
समवशरण रचना करें, खुश होके मनहार।।8।।
दो हजार सन् नो रहा, पावन वर्षा योग।
इसी बीच में बन गया, लिखने का संयोग।।9।।
नगर भीलवाड़ा शुभम्, पार्श्वनाथ दरबार।
अजारदारान मंदिर शुभम्, सोहे अपरम्पार।।10।।
दसवी अश्विन शुक्ल की, मिला पूर्ण आशीष।
रहा वीर निर्वाण शुभ, पच्चिस सौ पैंतीस।।11।।
अट्ठाईस तारीख को, हुआ पूर्ण यह कार्य।
करना भूल सुधार सब, ज्ञानी जन हे आर्य !।।12।।
समवशरण रचना विशद, करना सभी विधान।
अनुक्रम से मुक्ति मिले, पुण्य का बने निधान।।13।।

प.पू. 108 आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज की पूजन

पुण्य उदय से हे ! गुरुवर, दर्शन तेरे मिल पाते हैं।
श्री गुरुवर के दर्शन करके, हृदय कमल खिल जाते हैंङ्क
गुरु आराध्य हम आराधक, करते उर से अभिवादन।
मम् हृदय कमल में आ तिष्ठो, गुरु करते हैं हम आह्वाननङ्क

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

सांसारिक भोगों में फँसकर, ये जीवन वृथा गंवाया है।
रागद्वेष की वैतरणी से, अब तक पार न पाया हैङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, निर्मल जल हम लाए हैं।
भव तापों का नाश करो, भव बंध काटने आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध रूप अग्नि से अब तक, कष्ट बहुत ही पाये हैं।
कष्टों से छुटकारा पाने, गुरु चरणों में आये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, चंदन घिसकर लाये हैं।
संसार ताप का नाश करो, भव बंध नशाने आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय संसार ताप विध्वंशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गतियों में अनादि से, बार-बार भटकाये हैं।
अक्षय निधि को भूल रहे थे, उसको पाने आये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अक्षय अक्षत लाये हैं।
अक्षय पद हो प्राप्त हमें, हम गुरु चरणों में आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम बाण की महावेदना, सबको बहुत सताती है।
तृष्णा जितनी शांत करें वह, उतनी बढ़ती जाती हैङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, पुष्प सुगंधित लाये हैं।
काम बाण विध्वंश होय गुरु, पुष्प चढ़ाने आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

काल अनादि से हे गुरुवर ! क्षुधा से बहुत सताये हैं।
खाये बहु मिष्ठान जरा भी, तृप्त नहीं हो पाये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, नैवेद्य सुसुन्दर लाये हैं।
क्षुधा शांत कर दो गुरु भव की ! क्षुधा मेटने आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह तिमिर में फंसकर हमने, निज स्वरूप न पहिचाना।
विषय कषायों में रत रहकर, अंत रहा बस पछतानाङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, दीप जलाकर लाये हैं।
मोह अंध का नाश करो, मम् दीप जलाने आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय मोहान्धकार विध्वंशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अशुभ कर्म ने घेरा हमको, अब तक ऐसा माना था।
पाप कर्म तज पुण्य कर्म को, चाह रहा अपनाना थाङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, धूप जलाने आये हैं।
आठों कर्म नशाने हेतु, गुरु चरणों में आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता अरु बादाम सुपाड़ी, इत्यादि फल लाये हैं।
पूजन का फल प्राप्त हमें हो, तुमसा बनने आये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, भाँति-भाँति फल लाये हैं।
मुक्ति वधु की इच्छा करके, गुरु चरणों में आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय मोक्ष फल प्राप्ताय फलम् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रासुक अष्ट द्रव्य हे गुरुवर ! थाल सजाकर लाये हैं।
महाव्रतों को धारण कर लें, मन में भाव बनाये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अर्घ समर्पित करते हैं।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें गुरु, चरणों में सिर धरते हैंङ्क

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– **विशद सिंधु गुरुवर मेरे, वंदन करूँ त्रिकाल।**
मन-वन-तन से गुरु की, करते हैं जयमालङ्क

गुरुवर के गुण गाने को, अर्पित है जीवन के क्षण-क्षण।
श्रद्धा सुमन समर्पित हैं, हर्षायें धरती के कण-कणङ्क
छतरपुर के कुपी नगर में, गूँज उठी शहनाई थी।
श्री नाथूराम के घर में अनुपम, बजने लगी बधाई थीङ्क
बचपन में चंचल बालक के, शुभादर्श यूँ उमड़ पड़े।
ब्रह्मचर्य व्रत पाने हेतु, अपने घर से निकल पड़ेङ्क

आठ फरवरी सन् छियानवे को, गुरुवर से संयम पाया।
मोक्ष ज्ञान अन्तर में जागा, मन मयूर अति हर्षायाङ्क
पद आचार्य प्रतिष्ठा का शुभ, दो हजार सन् पाँच रहा।
तेरह फरवरी बंसत पंचमी, बने गुरु आचार्य अहा।।
तुम हो कुंद-कुंद के कुन्दन, सारा जग कुन्दन करते।
निकल पड़े बस इसलिए, भवि जीवों की जड़ता हरतेङ्क
मंद मधुर मुस्कान तुम्हारे, चेहरे पर बिखरी रहती।
तव वाणी अनुपम न्यारी है, करुणा की शुभ धारा बहती हैङ्क
तुममें कोई मोहक मंत्र भरा, या कोई जादू टोना है।
है वेश दिगम्बर मनमोहक अरु, अतिशय रूप सलौना हैङ्क
हैं शब्द नहीं गुण गाने को, गाना भी मेरा अन्जाना।
हम पूजन स्तुति क्या जाने, बस गुरु भक्ति में रम जानाङ्क
गुरु तुम्हें छोड़ न जाएँ कहीं, मन में ये फिर-फिरकर आता।
हम रहें चरण की शरण यहीं, मिल जाये इस जग की साताङ्क
gwIgnVmHomHag_Vngo, gmar__VmH$mË`mJH$a|Y&
श्री देव-शास्त्र-गुरु के चरणों में, मन-वच-तन अनुराग करेंङ्क
गुरु गुण गाएँ गुण को पाने, औ सर्वदोष का नाश करें।
हम विशद ज्ञान को प्राप्त करें, औ सिद्ध शिला पर वास करेंङ्क

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु की महिमा अगम है, कौन करे गुणगान।
मंद बुद्धि के बाल हम, कैसे करें बखानङ्क

इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज की आरती

(तर्ज:- माई री माई मुंडेर पर तेरे बोल रहा कागा.....)

जय-जय गुरुवर भक्त पुकारे, आरति मंगल गावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे ।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.......

ग्राम कुपी में जन्म लिया है, धन्य है इन्दर माता।
नाथूराम जी पिता आपके, छोड़ा जग से नाता।।
सत्य अहिंसा महाव्रती की.....2, महिमा कहीं न जाये।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.......

सूरज सा है तेज आपका, नाम रमेश बताया।
बीता बचपन आयी जवानी, जग से मन अकुलाया।।
जग की माया को लखकर के.....2, मन वैराग्य समावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.......

जैन मुनि की दीक्षा लेकर, करते निज उद्धारा।
विशद सिंधु है नाम आपका, विशद मोक्ष का द्वारा।।
गुरु की भक्ति करने वाला.....2, उभय लोक सुख पावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.......

धन्य है जीवन, धन्य है तन-मन, गुरुवर यहाँ पधारे।
सगे स्वजन सब छोड़ दिये हैं, आतम रहे निहारे।।
आशीर्वाद हमें दो स्वामी.....2, अनुगामी बन जायें।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के... जय...जय।।

रचयिता : श्रीमती इन्दुमती गुप्ता, श्योपुर